श्रीपाञ्चरात्रागमान्तर्गत - मन्त्रसिद्धान्तानुसारि

भगवदाराधनाविधिः



श्रीरस्तु

श्रीलक्ष्मीहयवदनपरब्रह्मणे नमः

चिरञ्जीविने रमेश भट्टराय द्विजाय सन्तु श्रेयांसि भूयांसि ॥

श्रीकृष्णमाचार्यः
श्रेयोभिलाषी
आ. शु. ~~द्वादशी~~ द्वादशी
वि. सं. २०७१

श्रीमते रामानुजाय नमः



श्रीपाञ्चरात्रनिपुणसंघपरिशोधित

श्रीपाञ्चरात्रागमान्तर्गत-मन्त्रसिद्धान्तानुसारि

भगवदाराधनाविधिः

प्रकाशका :

जीयर् एड्युकेषनल् ट्रस्ट्,

सीतानगरम्,

गुंटूर् जिला, (आन्ध्रप्रदेश) ५२२ ५०१,

Ph: 08645 - 272929

E-mail: jetsitanagaram@yahoo.com

सन्   २००७
प्रतियां - २०००
मूल्य -   रू: १००

ग्रथप्रप्तिस्थान्

१) जीयर् एड्युकेषनल् ट्रस्ट्,
सीतानगरम्, गुंटूर् जिला, आन्ध्रप्रदेश
पिन ५२२५०१, Ph: 08645 272929

२) जीयर् एड्युकेषनल् ट्रस्ट्,
जीयर्मार्ग, गगनमहलकालनी, दोमलगूडा,
हैदराबाद ५०० ०२९, आन्ध्रप्रदेश
040 - 23224426

३) श्रीरामानुजवाणी,
११ - ४९ - १३६
शिवालयं स्ट्रीट्
विजयवाड, आन्ध्रप्रदेश.
पिन् ५२० ००१,
Ph: 0866 - 2420 820

D.T.P. परिशोधनालय्, सीतानगर्.

विषयसूची

❖ ❖ ❖ ❖ ❖

श्रीमते रामानुजाय नमः

पीठिका

समस्त भुवन की सृष्टि-स्थिति-संहारों को लीला के रूप में ही करने वाले भगवान् श्रीमन्नारायण को आश्रय करने के लिए, एवम् उन के अधीन में रहने वाले परमानन्द को प्राप्त करने के लिए उस के अनुगुण स्वस्वरूप को जानने के लिए ही हम लोगों को यह मानवजन्म मिला; ऐसा आस्तिक दार्शनिकों का विश्वास है । इस जीवात्मा के स्वरूप एवं स्वभाव भगवदधीन हैं । अर्थात् यह जीव भगवान् का ही शेषभूत है । यह (जीव) ज्ञानस्वरूप है । प्रवृत्तिलक्षण ज्ञान की प्रेरणा से इस (जीव) के द्वारा किये जाने वाले समस्त व्यापार, (लौकिक-वैदिक कर्म) क्रमबद्ध इहलोक जीवनयात्रा के लिये अनुगुण एवं शरीरावसान के पश्चात् अपुनरावृत्तिलक्षण मोक्ष को प्राप्त करने के लिये उपयुक्त बनना चाहिए । उस के लिए अनुरूप शिक्षणात्मक जीवन यापन करने के लिए व्यवस्थित नियम ही साधन हैं । उन साधनों को बताने के लिए ही तन्त्रशास्त्रों का आविर्भाव हुआ । भिन्नाभिप्रायवाले व्यक्तियों से प्रवर्तित किये गये ये तन्त्र भी विभिन्नरूप से आविर्भूत हुये । तथापि इन सब का मूल वेद ही है । शिष्टलोग वेद को आगम, श्रुति, आम्नाय आदि नामों से व्यवहार करते हैं।।

'वेदाक्षराणि यावन्ति पठितानि द्विजातिभिः ।
तावन्ति हरिनामानि कीर्तितानि न संशयः ।।"

वैदिकोत्तम महानुभावलोग जितने वेदाक्षरों को पढेंगे वे एक एक ही (उच्चारण) एक एक हरिनाम कीर्तन के बराबर होंगे । अर्थात् उतने भगवन्नाम उन लोगों से उच्चारण किये जाते हैं । उक्त इस प्रमाण के अनुसार, और **'वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यः'** इस भगवद्गीतावाक्य के अनुसार भी समस्त वेदाक्षरराशि के द्वारा प्रतिपाद्य वस्तु श्रीमन्नारायण एक ही हैं । समग्र वेदराशि उन का ही प्रतिपादन करने में पर्यवसन्न होता है । अतः

'एकायनम्' यह नाम वेद के लिए अन्वर्थ है ।।

भगवान् बादरायण (वेदव्यास) जी ने संपूर्णवेदराशि को अवलोडन कर के ऋग्वेद-यजुर्वेद-सामवेदादि के रूप में विभाजित कर निर्देश किया । शायद अवशिष्ट मूल वेदराशि के लिये **'एकायनम्'** यह नामधेय स्थिर बन गया होगा । उस को अनुसरण करने वाले **'एकायनविद'** कहलाते हैं । कुछ दार्शनिकों को भी **'एकायन'** शब्द से लोक में व्यवहार करते हैं ।।

सांख्य-योग-कापाल-पाशुपत-शुद्धशैवादि भेद से तन्त्र अनेक हैं । उन (तन्त्रों) के द्वारा बताये गये साधन एवं फल अनेक रहने पर भी वे साधनानुष्ठान सब दुश्शक हैं । साथ ही वे तन्त्र, श्रुतिविरुद्धार्थ प्रतिपादक भी हैं । अतः शिष्टजनों ने उन का परिग्रह (आदर) नहीं किया । इसी लिए प्रभु श्रीमन्नारायण ने स्वयं ही एकायनश्रुति को अनुसरण करने वाले, अनुष्ठान करने के लिए सुशक (सुगम) शीघ्रफलदायक एवं शाश्वत नित्यानन्दसंधायक तन्त्रों (शास्त्रों) का आविर्भाव (उपदेश) किया । साक्षात् विष्णुमुखकमलनिस्सृत होने के कारण उन (तन्त्रों) को वैष्णवागम कहते हैं । उन (तन्त्रों) को नारदजी ने ऋषियों को सुनाया । इसी लिए महाभारत के मोक्षधर्म में **'नारायणमुखोद्गीतं नारदोऽश्रावयत्पुरा'** ऐसा कहा गया है । भगवान् को प्राप्त कराने वाले भगवदुक्त तन्त्र होने के कारण इसे **'भगवच्छास्त्र'** कहते हैं । पांच रात्रियों में उपदिष्ट ग्रन्थ होने के कारण इन वैष्णवागमों को **'श्रीपाञ्चरात्र'** भी कहते हैं । सांख्य-योग-कापाल-पाशुपत-शुद्धशैव नाम के इन पांच तन्त्रों को रात्री की तरह अप्रकाशक (प्रकाशहीन) बना कर स्वयं निरुपम प्रकाशयुक्त होने के कारण भी वैष्णवागम **'श्रीपाञ्चरात्र'** शब्द से व्यवहृत किये जाते हैं । विखनसमहर्षि एवं तच्छिष्यप्रोक्त वैखानस आगम भी श्रीपाञ्चरात्र के तरह विष्णुपारम्यप्रतिपादक ही हैं । किंचित् सिद्धान्तभेद रहने पर भी बाकी लक्षण, दोनों में समान ही कहा जा सकता है । श्रीपाञ्चरात्रागम के प्रतिपादक एक सौ आठ (१०८) संहितायें हैं - ऐसा यह निम्नांकित संहिताश्लोक के द्वारा अवगत होता है -

संवर्तः -

'शतमेकमथाष्टौ च पुराणे कण्व! शुश्रुम।

नामधेयानि चैतेषां श्रूयतां कथ्यते मया।।' (पाद्मसंहितायां ज्ञानपादे १-१८)

लगभग दो सौ चालीस (२४०) संहितायें हैं ऐसा पाश्चात्य परिशीलकों का अभिप्राय है। इसे रहने दें। पुनः एक सौ आठ संहिताओं में प्रतिपादित श्रीपाञ्चरात्र में चार प्रकार की आराधनापद्धतियां हैं - ऐसा पाद्मसंहितान्तर्गत निम्नश्लोक से अवगत होता है -

'ऋगादिसंज्ञया वेदश्चतुर्धा भिद्यते यथा।

तद्वत्सिद्धान्तभेदेन पञ्चरात्रं चतुर्विधम्।।' (पाद्मे-ज्ञानपादे १-७६)

इन संहिताओं में से कुछ कुछ संहितायें कुछ-कुछ (भिन्न भिन्न) विषयों में अपनी दृष्टि को केंद्रित करती हैं ऐसा मालूम होता है। उत्सवप्रक्रिया को प्राधान्य देने वाली संहितायें कुछ हैं तो नित्यविधि को प्रधानता देने वाली संहितायें और कुछ हैं। विशेष कार्यक्रमों को प्राधान्य देनेवाली कुछ हैं। यज्ञ-यागादियों को ही प्रधानरूप से बताने वाली संहितायें कुछ हैं। भगवन्मूर्तिलक्षणों को विपुलीकरण करने वाली कुछ हैं। इसी लिये अलग अलग संहिता, परिपूर्ण तन्त्रनिर्णय करने में समर्थ नहीं है। अतः समस्त संहिताओं का समीकरण करने पर ही निर्दुष्टरूप से तन्त्रनिरूपण करने के लिये कुछ अवकाश मिल सकता है।।

वर्तमान में देवालयों के नित्य-विशेषविधियों (कार्यक्रमों) के निर्वहण के लिए संबन्धित विषय तक मात्र ग्रहण (विचार) करने पर उपलब्ध संहिताओं के द्वारा एक निर्दुष्टाभिप्राय (निर्णय) मिलने में कोई विघ्न नहीं है। अर्थात् निष्कृष्ट निर्णय मिलता है। संहितासांकर्यदोष नाम से एक पक्ष रहने पर भी उस का अभिप्राय अलग है। *'अन्यतन्त्रार्गत एवं विरुद्धाभिप्रायप्रतिपादक, १०८ संहिताओं से बाह्य संहिताओं का सांकर्य श्रीपाञ्चरात्रसंहिताओं में नहीं होना चाहिए'* यह उस का तात्पर्य है। श्रीपाञ्चरात्रागम को **अङ्गी** के रूप में भावना करेंगे तो १०८ संहितायें तदङ्ग मानी जाती हैं। अंगों के मिलने पर ही **अङ्गी** बनता है। अतः संहितासांकर्य कहना उचित नहीं है। १०८ संहिताओं के द्वारा प्रतिपादित किया जाने वाला विषय एक ही होने के कारण इन (संहिताओं) के

ऐकशास्त्र्य में भंग नहीं है । संहिताभेद होने पर भी लक्ष्य में भेद नहीं है। अर्थात् पुरुषार्थप्रतिपादन में भेद नहीं है । इन श्रीपाञ्चरात्रसंहिताओं से अनेक भगवदालय के आराधनानुकूल प्रयोगों को कितने ही लोगों ने आज तक तैयार किया है । तथापि प्रस्तुत इस प्रयोग को संकलन करने के लिए प्राप्त आवश्यकता के बारे में थोडा सा प्रस्ताव करना अत्यन्त सांदर्भिक है ।।

भगवत्प्रतिपादक श्रीपाञ्चरात्रसंहिताओं को अनुसरण कर के (काल-परिस्थिति के अनुरूप) भगवान् की प्रतिष्ठायें भिन्न-भिन्न रीति से की जाती थीं ऐसा अवगत होता है । तत्तत् प्रतिष्ठित भगवन्मूर्ति को अनुसरण कर के आराधनापद्धतियों को भी भिन्न रीति से श्रीपाञ्चरात्रशास्त्र ने ही विभाजन कर के सिद्धान्त कर रक्खा है । ऐसे सिद्धान्त प्रधान रूप से चार हैं - ऐसा आगे उदाहरण के रूप में दिये जा रहे प्रमाण से अवगत होता है । वे (सिद्धान्त) **१) मन्त्र, २) आगम, ३) तन्त्र, ४) तन्त्रान्तर** हैं । समग्रवेदराशि का अध्ययन करने में अक्षम लोगों के लिए ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद इन चारों को विभाजन कर के जिस प्रकार (महर्षियों ने) तत्तत् अधिकारियों को उपदेश दिया, उसी प्रकार अधिकारि लोग अपनी शक्ति के अनुसार आराधना करें, इस भावना से भगवान् ने श्रीपाञ्चरात्र को भी चार प्रकार से विभाजन कर दिया । प्रमाण श्लोक इस प्रकार हैं -

'एकमूर्तिप्रधानं तु मन्त्रसिद्धान्तमुच्यते ।
चतुर्मूर्तिप्रधानं तु यत्तदागमसंज्ञितम् ।।
सिद्धान्तमुच्यते सद्भिः द्वितीयं लोकविश्रुतम् ।
नवमूर्तिप्रधानं च तन्त्रसिद्धान्तमुच्यते ।।
चतुर्वक्त्रे त्रिवक्त्रे वा देवे यत्रार्चनाविधिः ।
तत्तन्त्रान्तरमिष्टं स्यात् तन्त्रमेतत् चतुर्विधम् ।।'

(पाद्मे-ज्ञानपादे १-८०, ८१, ८२)

इन १०८ संहिताओं में एक एक सिद्धान्तों को विवरण करने के लिए कुछ कुछ संहितायें व्यवस्थित हुयी हैं । ऐसा इस प्रमाण से अवगत होता है । जिस सिद्धान्त के अनुसार आलय का कर्षणादि प्रतिष्ठान्त

कार्यक्रम किया जाता है । उस आलय के नित्याराधनादि विशेष क्रियाकलाप भी उसी सिद्धान्तानुसारी संहिता में बताये गये अनुसार करना चाहिए । ऐसा निर्णय है । इतरसिद्धान्तसांकर्य इस विषय में उचित नहीं है । ऐसा निम्ननिर्दिष्ट पाद्मसंहिता के प्रमाण से स्पष्ट होता है -

'सांकर्यं न तु कुर्वीत सिद्धान्तेषु परस्परम् ।
यदि संकरतो मोहात् राजा राष्ट्रं च नश्यति ।।

येन सिद्धान्तमार्गेण कर्षणादिक्रियाः कृताः ।
तेनैव सकलं कर्म कुर्यात् तन्त्रविभागवित् ।।'

(पाद्मे-ज्ञानपादे १-८४, ८५)

सिद्धान्तसांकर्य शब्द से कुछ लोग संहितासांकर्य विषयक भ्रम में भी पड जाते हैं । यहां इस विषय में ध्यान देना है कि - इन श्रीपाञ्चरात्रागमसंहिताओं में कितनी कितनी संहितायें किस किस सिद्धान्त के अंतर्गत हैं, यह विषय अद्यावधि निर्णय नहीं हो सका है । कारण - १०८ संहिताओं के नामों के अलावा अनेक ग्रन्थ (संहितायें) लभ्य नहीं हो रहे हैं ।।

संहिताप्राधान्य की अपेक्षा सिद्धान्तप्राधान्य को स्मरण करना आवश्यक है - ऐसी भावना से हम ने इस ग्रन्थ को '**श्रीपाञ्चरात्रागमान्तर्गत मन्त्रसिद्धान्तानुसारिणी**' इस नाम से सूचित किया है ।।

पाद्मसंहिता में इस सिद्धान्त के विषय में प्रस्तावित स्थल में ही - '**तेष्वयं मन्त्रसिद्धान्तः पाद्मसंज्ञोऽभिधीयते**' (पाद्मे-ज्ञानपादे १-८६) ऐसा बताया गया । अतः मन्त्रसिद्धान्त को विस्तार करने वाली संहिताओं में से पाद्म एक है ऐसा अवगत होता है । उस (पाद्म) में विद्यमान प्रक्रिया ही श्रीप्रश्न-विश्वामित्रादि संहिताओं में भी उपलब्ध होने के कारण वे भी मन्त्रसिद्धान्त को ही अनुसरण करने वाली संहितायें हैं ऐसी मान्यता रक्खी जाती है ।।

ईश्वरसंहिता में भी इस सिद्धान्त की प्रस्तावना में **आगम, मन्त्र, तन्त्र, तन्त्रान्तर** इस प्रकार सिद्धान्तों के नामों का निर्देश करते समय,

पहले **आगमसिद्धान्त** का नाम उपादान किया गया है★ । अत: वह (ईश्वरसंहिता) आगमसिद्धान्तानुसारिणी है - ऐसी भावना की जाती है। (इसी विषय को श्रीप्रश्नसंहिता की पीठिका में भी विस्तृत किया है) ।।

हाल में हमारे आन्ध्रप्रदेश में विद्यमान समग्र प्रसिद्ध वैष्णवक्षेत्रों में एवम् दक्षिणदेश में विद्यमान अनेक श्रीवैष्णवक्षेत्रों में भी आराधनापद्धति मन्त्रसिद्धान्तानुसार ही चल रही है ऐसा सब (विद्वान्) परिशीलकों ने अपने अपने अभिप्राय को व्यक्त किया । तत्तत् आलयों की प्रतिष्ठा उसी ढंग (मन्त्रसिद्धान्त के अनुसार) से ही की गयी होगी । उस का कारण आगम प्रभृति सिद्धान्त के अनुसार आराधनादियों को निर्वहण करने में श्रम ही हो सकता है ।।

मन्त्रसिद्धान्त के लिए पाद्मसंहिता ही प्रधान होने के कारण प्रयोगग्रन्थ को लिखने वाले सब महानुभावलोग '**पाद्मसंहितोक्तविधिः**' अथवा '**पाद्मसंहितानुसारिणी**' ऐसा अपने ग्रन्थ को व्यक्त करते हैं । यह एक आचार ही बन गया ।।

पाद्मसंहिता, नित्याराधना से लेकर प्रतिष्ठान्त तक की विधि को, उपलब्ध अनेक संहिताओं की अपेक्षा समग्र रूप से ही विवरण करती है। यह निस्संशय है । इतना ही नहीं । इस संहिता का प्राचीनत्व आधुनिक परिशीलकलोगों के द्वारा भी स्वीकार किया जाना इस की विशेषता है । यह (पाद्म) संहिता मन्त्रसिद्धान्त को विवरण करने वाली अनेक संहिताओं में अन्यतम है - यह विषय अविस्मरणीय है ।।

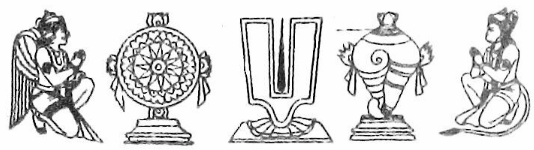
उस सिद्धान्त के अनुसार प्रयोग को तैयार करते समय उस सिद्धान्त को अनुसरण करने वाली सब संहिताओं का परिशीलन करना, उन सब में बताये गये अनुसार प्रयोग को शुद्धरूप देना अवर्जनीय एवम् आवश्यक भी है ।।

सिद्धान्तगत वैविध्य के विषय में एवम् उन के सांकर्य में विद्यमान दोषों के विषय में, प्रयोगों के निर्माण में एकसिद्धान्तानुसरण के विषय में **मैसूर महाराजा संस्कृतमहाविद्यालय के श्रीपाञ्चरात्रागमविद्वान् श्रीमान्**

★ *चतुर्धा भेदभिन्नोऽयं पाञ्चरात्राख्य आगमः । पूर्वमागमसिद्धान्तं द्वितीयं मन्त्रसंज्ञितम् ।। तृतीयं तन्त्रमित्युक्तमन्यत्तन्त्रान्तरं भवेत् ।। (ईश्वरसंहितायाम् २१-५६०)*

श्रीमते रामानुजाय नमः

श्रीमते नारायणाय नमः



श्रीपाञ्चरात्रागमान्तर्गत-मन्त्रसिद्धान्तानुसारि

भगवदाराधनाविधिः

आचार्यः नित्यकर्म परिसमाप्य । आलयप्रांगणं गत्वा । आजानुपादौ आमणिबंधात् हस्तौ च प्रक्षाल्य, आचम्य, आलयं द्विःप्रदक्षिणीकृत्य, ★घंटां नादयित्वा । ध्वजस्तंभस्य पुरतः साष्टांगं प्रणम्य, द्वारपार्श्वे गत्वा, चंडप्रचंडौ प्रणम्य, अंगन्यासं कुर्यात् ।

'ओं आचक्राय स्वाहा, हृदयाय नमः
ओं विचक्राय स्वाहा, शिरसे स्वाहा,
ओं सुचक्राय स्वाहा, शिखायै वषट्,
ओं सूर्यचक्राय स्वाहा, कवचाय हुम्,
ओं ज्वालाचक्राय स्वाहा, नेत्राभ्यां वौषट्,
ओं सुदर्शनचक्राय स्वाहा, अस्त्राय फट्

इति षडंगन्यासं कृत्वा

द्वारस्य वामपार्श्वे स्थित्वा, हस्ताभ्यां ★★ ताळत्रयं कृत्वा ।

★ *गर्भमन्दिर से बाहर जगमोहन (मुखमण्डप) में बगल में लगी हुयी घण्टी को बजावें ।*

(गर्भमन्दिर से ठीक सामने भाग में घण्टी को नहीं लटकाना चाहिए).

★★ *दक्षेण वामं संताड्य वामहस्तेन दक्षिणम् ।*
वामं दक्षिणहस्तेन कुर्यात्तालत्रयं बुधः ।।
एकताळेन मरणं द्विताळे व्याधिपीडनम् ।
त्रिताळे सुखमाप्नोति तस्मात्तालत्रयं कुरु ।। (विहगेंद्रे षष्ठपटले)

'ओं यं वायवे नमः,' इति, वायुमंत्रेण तूर्यादि मंगळवाद्यघोषैः कवाटमुद्धाट्य

'ओं अतिपातायै मित्राः पातायै क्षत्राः पातायै धनाः पातायै शुभाः पातायै'

इति देवव्रतसामोच्चरन् दक्षिणांघ्रिणांऽतः प्रविश्य ।

जितं ते पुंडरीकाक्ष! नमस्ते विश्वभावन!।
नमस्तेस्तु हृषीकेश! महापुरुष! पूर्वज! ।।

इति पुण्डरीकाक्षविद्यया देवं प्रणमेत् ।

'ओं तेजसे फट्' इति नेत्रमंत्रेण दीपान् प्रज्वाल्य, निर्माल्यं विसृज्य, विष्वक्सेनाय दद्यात् ।।

१. स्थानशुद्धिः

ततः वितानं, सिंहासनं, भूमिं, भित्तिं, वेदिकां परितश्च

*शुचीवो हव्या मरुत श्शुचीनां शुचिं हिनो म्यध्वरं शुचिभ्यः। ऋतेन सत्यमृतसाप आयन्छुचि जन्मान श्शुचयः पावकाः। अग्निश्शुचि व्रततम श्शुचिर्विप्रश्शुचिः कविः । शुचीरोचत आहुतः । उदग्नेशुचयस्तव शुक्रा भ्राजंत ईरते। तवज्योतीग्ष्यर्चयः ।।

इति मंत्रेण गंधोदकेन मार्जयित्वा ।

२. पात्रशुद्धिः

पात्राणि च संशोध्य

इस ग्रन्थ में दो-तीन ऋग्वेद के मन्त्र हैं । बाकी सब के सब वैदिकमन्त्र कृष्णयजुर्वेद के अनुसार दिये गये हैं । पढते समय अपनी अपनी शाखा के अनुसार स्वरों का अनुसन्धान करें ।।

३. बिम्बशुद्धिः

ततो बिम्बान् 'तच्छंयो'रिति मंत्रेण शुद्धवस्त्रेण शोधयित्वा, ततः शयनस्थं नारायणं ।

"प्रबुद्ध त्वं जगन्नाथ! प्रबुद्ध परमेश्वर!
प्रबुद्ध पुण्डरीकाक्ष! भक्तानामनुकंपया ॥

त्वयि प्रबुद्धे देवेश! तवाग्रे परमेश्वर! ।
लौकिकानीह यज्ञानि तानि निर्वर्तयाम्यहम् ॥

अग्रतस्सर्वयज्ञानां त्वं प्रभुर्नामतस्सदा ।
नापरेषु जगन्नाथ! पूजितेषु सुरेष्वपि ॥

मयि यज्ञसमाप्तिस्स्यात् त्वयि संतर्पितेऽनले ।
सर्वे देवा ऽनलमुखास्तथाग्निस्त्वन्मुखे कृतः ॥

ब्रह्मा स्वयं ब्रह्मलोके स्वर्गे स्वर्गनिवासिनः ।
सात्त्विका मानुषे लोके नागाद्याश्च रसातले ॥

त्वां हि प्रबोधयन्त्येते स्वार्थसंसिद्धये सदा ।
त्यज योगमयीं निद्रां कृपां कुरु सनातन! ॥

★ इत्यादिस्तोत्रैः प्रबोध्य, शयनादुत्थाप्य, भद्रासने उपवेश्य, शयनबेरस्थं अनिरुद्धशक्तिं **'ओं नमो नारायणाय यथास्थानमुद्वासयामि'** इति कर्मबेरद्वारा मूलबेरे नियोज्यं, ततो यवनिकामपसार्य, गोपृष्ठ-अश्ववक्त्र-गजानन- कन्या- नीलकेश-दर्पणादीन्प्रदर्श्य, हरये नीराजनं दद्यात्, भगवंतं जितन्तादिस्तोत्रैः कीर्तयेत् ।

★ *तत्तत् देवालयों में विराजमान विभवस्वरूप के अनुरूप सुप्रभातस्तोत्र का अनुसन्धान करना चाहिए ।*

कौसल्यासुप्रजा राम! पूर्वा संध्या प्रवर्तते ।
उत्तिष्ठ नरशार्दूल! कर्तव्यं दैवमाह्निकम् ।
उत्तिष्ठोत्तिष्ठ गोविंद! उत्तिष्ठ गरुडध्वज! ।
उत्तिष्ठ कमलाकान्त! त्रैलोक्यं मंगळं कुरु ॥ इत्यादि

'जितं ते पुंडरीकाक्ष! नमस्ते विश्वभावन! ।
नमस्तेस्तु हृषीकेश! महापुरुष! पूर्वज!' ।।

शर्करामिश्रितगोक्षीरादि निवेद्य, नीराजनं कुर्यात्
तूर्यादिघोषे प्रवर्तिते देवस्य यागार्हं शुद्धं गाळितं जलं कुंभेन

(ए) नदी-तटाक-कूपादिभ्यः आनीय, तेन जलेन गळन्तिका-मापूर्य, वेदिकायां निक्षिप्य, शिष्येण परिचारकवरेण वा चंडप्रचंडादि-द्वारपालादारभ्य महाबलिपीठान्तं प्रणवादि नमोन्तैः, तत्तन्नाममंत्रैः परिवारदेवानाराधयेत्* । परिचारकाभावे स्वयमेव तान् अष्टोपचारैः (अर्घ्य, पाद्य, आचमनीय, स्नान, चन्दन, पुष्प धूप, दीपैः) अर्चयेत्, ततः गर्भगेहं प्रविशेत्, निच्छिद्रां यवनिकां च आच्छादयेत् ।

४. अ) भूतशुद्धिः

देवस्य दक्षिणे पार्श्वे शुद्धविष्टरं अस्त्रमन्त्राभिमन्त्रितजलेन प्रोक्ष्य, छोटिकान् कृत्वा, तस्मिन् पद्मासनं स्वस्तिकासनं वा बद्ध्वा, उपविश्य, ** घंटां नादयित्वा, बहिः तूर्यघोषे प्रवर्तिते **'ओं रं सहस्रार हुं फट्'** इत्यस्त्रमन्त्रेण सर्वदिग्बंधनं कृत्वा **'ओं रां नमः पराय कालानलात्मने'** इत्यग्निप्राकारमुद्रया आत्मनः परितः, प्राकारवत् स्थितमग्निं ध्यात्वा **'ओं नमो भगवते सुदर्शनाये'** ति मन्त्रेण आकाशे चक्रमुद्रां विन्यस्य, पवित्रपाणिः--

---

(ए) "इमं मे वरुण श्रुधीहव मद्याच मृडय त्वाम वस्युराचके । तत्वायामि ब्रह्मणा वन्दमान-स्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः । अहेडमानो वरुणेह बोध्युरुस ँ समानआयुः प्रमोषीः"

** अनुबन्ध को देखें*

*** उद्घाटने कवाटस्य प्रस्तुते पूजने तथा । आवाहनेऽर्घ्ये स्नपने पुष्पे धूपे च दीपके ।।*
नीराजने यवनिकासमुद्धारे निवेदने । होमे भूतबलौ कर्मण्युद्वाहे चलने मणेः ।।
(पाद्मे, क्रिया १३-१४-१५)

★ प्राणायामत्रयं प्रणवेन कुर्यात् । अथ योगमुद्रां बध्वा । नाभिकंदे (स्थितं) वेद्याकारं, चतुरश्रं, धूम्रवर्णं, वायुबीजं **'ओं यं'** इति ध्यात्वा, तज्जेन वायुना देहपाप्मानं शोषयित्वा ।

हृदंबुजे स्थितं त्रिकोणं, रक्तवर्णं, अग्निबीजं **'ओं रं'** इति ध्यात्वा, तदुत्थवह्निज्वालाभिः देहकल्मषं दाहयित्वा ।

कंठे स्थितं चतुरस्रं, पीतवर्णं, महेंद्रबीजं **'ओं लं'** इति ध्यात्वा, तदुत्थवायुना उत्थितमग्निं स्तंभयित्वा ।

मूर्धस्थं वृत्ताकारं, स्फटिकवर्णं, वारुणबीजं **'ओं वं'** इति ध्यात्वा, तज्जामृतांभसा आपादतलमस्तकं देहं क्षाळयेत्★★ ॥

आ) तत्त्वसंहारन्यासः

अथ, **"ओं तत्त्वसंहारमुद्रायै नमः"** इति तत्त्वसंहारमुद्रां प्रदर्श्य, समाधिपरया धिया पादतलादाजानुस्थितां, शब्द-स्पर्श-रूप-रस-गंधगुणयुतां, घ्राणोपस्थेन्द्रिययुतां, पीतवर्णां, चतुरस्रां, पृथ्वीं गंधतन्मात्रायां संहृत्य ।

★ प्रणवेन (गायत्रीमन्त्र से नहीं) रेचकं षोडशमात्राभिः, पूरकं द्वात्रिंशन्मात्राभिः, कुंभकं चतुष्षष्टिमात्राभिः, रेचकं च पुनः षोडशमात्राभिः कुर्यात् ॥

★★ इस आराधनाक्रम में यहां तक (इस आराधक के) स्थूलदेह से संलग्न समस्तपापों का भस्म होना और सुक्षालित होकर देह का पवित्र होना एवम् भगवत्कैंकर्यप्राप्ति के लिए इस देह से जीव को बाहर निकलने के लिए अनुगुण एक प्रक्रिया की भावना बतायी गयी ॥ अब आगे इस जीव को इस प्रकार भावना करनी चाहिये कि - पंचभूततन्मात्राओं को एवं सूक्ष्मशरीर को लेकर (स्थूलशरीर से) ब्रह्मरन्ध्रद्वारा बाहर निकल कर ध्रुवमूर्ति (भगवान् के अर्चाश्रीविग्रह) के श्रीपादों में पहुंच कर वहां से (भगवान् के श्रीचरण से) उत्पन्न अग्निसे, परित्यक्त स्थूलशरीर भस्मसात् हुआ । उस के बाद ऐसी भावना करनी चाहिए - आकाश में क्षीरसागर, उस में एक कमल की उत्पत्ति उस के बाद स्वयं अपने आप को भगवान् से उस कमल में आए हुए एक व्यक्ति के रूप में स्मरण करना चाहिए । सूक्ष्मशरीरविशिष्ट जीव, उन उन तन्मात्राओं के एक एक विस्तृत होने पर इन सब (तन्मात्राओं) का परिशुद्ध पाञ्चभौतिकशरीर के रूप में परिणत होना, उस के बाद यों भावना करें - नीचे से अमृत का प्रवाह एक ही बार कमल के द्वारा ऊपर आने से यह जीव स्वयं स्नान कर के निर्मल होकर भगवदाराधना के

जानोरागुह्यस्थिताः, शब्द-स्पर्श-रूप-रसगुणयुताः, रसनापाय्विन्द्रिययुताः, श्वेतवर्णाः, अर्धचंद्राकृतीः, अपः गंधतन्मात्रया सह रसतन्मात्रायां संहृत्य ।

गुह्यादानाभिस्थितं, शब्द-स्पर्श-रूपगुणकं, दृष्टिचरणेन्द्रिय युतं, पाटलवर्णं, त्रिकोणमग्निं, रसतन्मात्रया सह रूपतन्मात्रायां संहृत्य।

नाभेराघ्राणस्थितं, शब्द-स्पर्शगुणकं, त्वक्करेन्द्रिययुतं, धूम्रवर्णं, वृत्ताकारं, वायुं रूपतन्मात्रया सह, स्पर्शतन्मात्रायां संहृत्य ।

घ्राणादामौळिस्थितं, शब्दगुणकं, श्रोत्रवाक्सहितं, नीलोत्पलदल प्रभं, आकाशं, स्पर्शतन्मात्रयासह शब्दतन्मात्रायां संहृत्य ।

शब्दतन्मात्रां सितासितवर्णे मनसि संहृत्य, मनः पाटलाहङ्कृतौ संहृत्य, अहंकृतिं स्फटिकप्रभबुद्धौ, बुद्धिं सितप्रकृतौ, प्रकृतिं च पूरकेनैकेन भास्कराभजीवे च संहृत्य, नाभिचक्रस्थं वासनाविवशं सुसूक्ष्मं भास्कराभजीवं कुंभकेन वायुना पद्मसूत्रसुसूक्ष्मया सुषुम्नानाडिकया देहे उपर्यारोप्य, ब्रह्मरंध्रं भेदयित्वा, रेचकेन देहात् बर्हिर्निर्गमय्य, सूर्यमण्डलं प्रवेश्य, तन्मण्डलाच्च बहिर्निर्गमय्य, स्थूलवासनाशरीररहितं जीवं ध्रुवे परस्मिन् ब्रह्मणि स्थितं ध्यायेत्।

ततः आत्मनः दक्षिणपादाग्रे रक्तवर्णं **'ओं रं'** इत्यग्निबीजं ध्यात्वा, तदुत्थज्वलनत्विषा, परित्यक्तं स्थूलयोनिजं देहं पादादि-मूर्धपर्यन्तं दहेत् ।

३) तत्त्वसृष्टिन्यासः

ततः **'ओं सृष्टिमुद्रायै नमः'** इति सृष्टिमुद्रां प्रदर्श्य, अयुत पूर्णचन्द्रसमप्रभं **'ओं वां'** इत्यन्तरिक्षे निवृत्तिबीजं ध्यात्वा, तदुत्थपीयूषनिधिसमुद्भूतपांडुरपङ्कजे ब्रह्मणस्सकाशात् सूक्ष्म

शरीरविशिष्टं जीवं समुत्पन्नं स्मरेत्, जीवात् सितप्रकृतिं, प्रकृतेः स्फटिकप्रभबुद्धिं, बुद्धेः पाटलाहङ्कृतिं, ततः सितासितमनः, मनसश्शब्दतन्मात्रां, शब्दतन्मात्रायाः वाक्श्रोत्रेन्द्रिययुतं स्पर्शतन्मात्रया शब्द गुणकमाकाशं, स्पर्शतन्मात्रायाः त्वक्करेन्द्रिययुतं रूपतन्मात्रया सह शब्दस्पर्शगुणकं वायुं, रूपतन्मात्रायाः दृष्टिचरणेन्द्रिययुतं रसतन्मात्रया सह शब्द-स्पर्श-रूपगुणकमग्निं, रसतन्मात्रायाः रसनापाय्विन्द्रिययुताः गंधतन्मात्रया सह शब्द-स्पर्श-रूप-रसगुणकाः अपः, गंधतन्मात्रायाः घ्राणोपस्थेंद्रिययुतां शब्द-स्पर्श-रूप-रस-गंधगुणकां पृथिवीं च समुत्पन्नां स्मरेत् ।

इत्थं पांचभौतिकं स्वशरीरं सृष्टं विचिन्त्य, पूर्वोक्तस्वाधारश्वेत-पंकजात् समुद्भूतैः सुवर्णकुंभपूर्णैः अमृतवारिभिः स्नापितं शुद्धमनघं परमात्मनः आराधनयोग्यं च स्वशरीरं मत्वा मंत्रन्यासं कुर्यात् ।

ई) मन्त्रन्यासः १) करे मन्त्रन्यासः

अस्य श्रीमदष्टाक्षरमहामन्त्रस्य अन्तर्यामी नारायणः ऋषिः, देवी गायत्री छंदः, परमात्मा श्रीमन्नारायणो देवता, अं बीजं, उं शक्तिः, मं कीलकं, शुक्लो वर्णः, बुद्धिस्तत्वं, परमं व्योम क्षेत्रं, भगवत्समाराधनार्थे विनियोगः, 'ओं रं सहस्त्रार हुं फट्' इति करतलकरपृष्ठौ शोधयित्वा ।

ओं ओं ओं शुक्लवर्णं दक्षिणांगुष्ठेन दक्षिणतर्जनीपर्वे
ओं नं ओं स्वर्णवर्णं दक्षिणांगुष्ठेन दक्षिण मध्यमपर्वे
ओं मों ओं कृष्णवर्णं दक्षिणांगुष्ठेन दक्षिणानामिकापर्वे
ओं नां ओं रक्तवर्णं दक्षिणांगुष्ठेन दक्षिणकनिष्ठिकापर्वे
ओं यं ओं कुंकुमवर्णं वामांगुष्ठेन वामतर्जनीपर्वे

ओं णां ओं पद्मवर्णं वामांगुष्ठेन वाममध्यमपर्वे
ओं यं ओं पीतवर्णं वामांगुष्ठेन वामानामिकापर्वे
ओं रां ओं सर्ववर्णं वामांगुष्ठेन वामकनिष्ठिकापर्वे ।।

इति करन्यासं कृत्वा

२) करतलषडंगन्यासः

★ ओं कुमुदवर्णाय क्रुद्धोल्काय अंगुष्ठाभ्यां नमः
ओं बंधूकवर्णाय म्होल्काय तर्जनीभ्यां स्वाहा
ओं असितोत्सलवर्णाय वीरोल्काय मध्यमाभ्यां वषट्
ओं अब्जकेसरवर्णाय द्युल्काय अनामिकाभ्यां हुम्
ओं अंभोजवर्णाय सहस्त्रोल्काय कनिष्ठिकाभ्यां फट्
ओं अतसीकुसुमवर्णाय तेजोल्काय नखमुखेभ्यो वौषट्

इति करतलषडंगन्यासं कृत्वा

३) व्यापकन्यासः

ततो दक्षिणहस्ते **'ओं पं पद्माय नमः, ओं सुदर्शनाय नमः'** इति पद्मचक्रेन्यस्य, वामहस्ते **'ओं नमो भगवत्यै गदायै भवरूपिण्यै कौमोदक्यै हुं फट् स्वाहा'**, **'ओं नमो भगवते पुण्डरीकाक्षाय वायुमुखाय दीप्तरूपाय शंखपालाय स्वाहा'** इति च गदाशंखे विन्यस्य, तदुत्थोज्वलतेजोभिः द्वाभ्यां हस्ताभ्यां मूर्धादिपादपर्यन्तं देहे न्यसेत् ।।

★ *अंगुलीनां च सर्वासां पर्वस्वाद्यन्तवर्तिषु ।*
इष्यते प्रणवन्यासो मध्यमेषु च पर्वसु ।।
मन्त्राक्षराणि विन्यस्येत् न्यास एष सनातनः ।

४) देहे स्थितिन्यासः

ओं रां ओम् इति अंगुष्ठकनिष्ठिकाभ्यां नाभौ
ओं यं ओम् इति विनांगुष्ठसर्वांगुळीभिः गुह्ये
ओं णां ओम् इति विनांगुष्ठसर्वांगुळीभिः जान्वोः
ओं यं ओम् इति सर्वांगुळीभिः पादयोः
ओं ओं ओम् इति मध्यमांगुल्या मूर्ध्नि
ओं नं ओम् इति तर्जनीमध्यमाभ्यां नेत्रयोः
ओं मों ओम् इति अंगुष्ठानामिकाभ्यां मुखे
ओं नां ओम् इति अंगुष्ठतर्जनीभ्यां हृदये च न्यासं कृत्वा

५) देहे अंगन्यासः

ओं ओं ओं क्रुद्धोल्काय हृदयाय नमः
ओं नं ओं महोल्काय शिरसे स्वाहा
ओं मों ओं वीरोल्काय शिखायै वषट्
ओं नां ओं द्युल्काय कवचाय हुम्
ओं रां ओं तेजोल्काय नेत्राभ्यां वौषट्
ओं यं ओं सहस्रोल्काय अस्त्रायफट्
ओं णां ओं क्रुद्धोल्काय हृदयाय नमः
ओं यं ओं महोल्काय शिरसे स्वाहा ।।

इति च तत्तन्मुद्राः प्रदर्शयन् कुर्यात् । किरीट, कुंडल, वनमाल, श्रीवत्स, कौस्तुभ, चक्र शंख, पद्म, गदामुद्रादींश्च, पादाग्रे गरुड-मुद्रां च कृत्वा, अष्टाक्षरमूर्तिध्यानं कुर्यात् ।।

५) अष्टाक्षरमूर्तिध्यानम्

श्लो।। चतुर्भुजमुदारांगं चक्राद्यायुधसेवितम् ।
कालमेघप्रतीकाशं पद्मपत्रायतेक्षणम् ।।

पीतांबरधरं सौम्यं प्रसन्नेंदुनिभाननम् ।

चारुकाशं सुताम्रोष्टं रत्नोज्ज्वलितकुंडलम् ।।

सुभ्रूललाटमकुटं घनकुंचितमूर्धजम् ।

ललाटतिलकं सौम्यं दीपवत्स्वेतमृत्स्नया ।

स्फुरद्भास्करवर्णाभं शोभितं वनमालया ।।

प्रद्योतनसहस्राभभूषणैरपि मण्डितम् ।

दिव्यचंदनलिप्तांगं दिव्यमालाविभूषितम् ।।

श्रीभूमिभ्यां सुखासीनं स्वर्णसिंहासने शुभे ।

ध्यात्वैवं देवदेवेशं मंत्रजापपरो भवेत् ।।

एवं ध्यात्वा, मानसयागं कुर्यात् ।।

3) मानसयागः*

अथ कुंभकेन वायुना अधोमुखस्थं नाभिपद्ममुन्नमय्य, समुद्धाट्य, तस्योपरि मनसा पीठं परिकल्प्य, तस्मिन्वनमालादिदिव्यभूषण-भूषितं, पीताम्बरधरं, चतुर्बाहुं, श्री-भूमिसहितं, उद्धृतानेकदिव्यायुध-धरं, भगवंतं, मूलबेरादागतं ध्यात्वा ।

स्वागतं देवदेवेश! हृत्पद्मे सन्निधिं भज ।

गृहाण मानसीं पूजां यथार्हपरिभाविताम् ।।

इति मनसा विज्ञाप्य, भगवंतं सुप्रसन्नं मत्वा, सन्निधिमुद्रां, सन्निरोधमुद्रां, साम्मुख्यमुद्रां च प्रदर्शयन् संप्रार्थ्य, अष्टाक्षरविद्यया देहे मन्त्रन्यास, षडंगन्यासौ च कृतं ध्यात्वा, संभाव्य, किरीट-वनमालादि सर्वमुद्राः मनसि प्रदर्श्य, मधुपर्कं निवेद्य, देवं स्नानासने स्थितं ध्यात्वा, अभ्यंगनादिस्नानं स्मृत्वा, ततो मानसे अलंकारासने सुखासीनं विभाव्य, किरीटाद्यैः भूषितं ध्यात्वा, छत्रादि धूपदीपान्तं मनसा दर्शयित्वा, मानसे भोज्यासने सुखासीनं भगवंतं संप्रार्थ्य, खाद्य, चोष्य, लेह्य, पेयादिभिर्युतं चतुर्विधमन्नं देवाय विनिवेदितं मत्वा, अनंतरं मनसि होमं कुर्यात् ।।

★ श्रीप्रश्नसंहिता में स्वीकार किया गया है ।

हृदयकमले चिदग्निमुत्पाद्य, त्रिकोणे कुंडे अष्टाक्षरविद्यया नारायणात्मकं ध्यात्वा, इध्मप्रक्षेपणाघाराहुतीः आज्यभागाहुतीः व्याहृत्याहुतीः इति चतुष्टयं कृतं मत्वा, 'द्विशीर्षक'★ मित्यग्निं ध्यात्वा **'ओं रं अग्नये नमः'** इति अग्निमंत्रेणाग्निं गंधपुष्पाक्षतैरर्चितं मूल-मंत्रेण परिषिंचितं मत्वा, अग्निमध्ये योगपीठे भगवंतं विचिन्त्य, समिधाष्टकेनाहुतीः, चरुणा पुरुषसूक्तेन षोडशाहुतीः, आज्याहुतीः, स्विष्टकृत्प्रायश्चित्ताहुतीः, पूर्णाहुतिं च कृतं मत्वा, देवमग्निस्थं यथास्थान मुद्वास्य, **'मानसाराधनमिदं गृहाण स्वाहा'** इति होमफलं भगवते निवेदयेत्, नाभिपद्मस्थं भगवंतं पुनर्मूले नियोजयेत् ।।

५. मन्त्रशुद्धिः

" ओं यं इति मन्त्रवर्णानि शोषयेत्
ओं रं इति मन्त्र वर्णानि दाहयेत्
ओं लं इति मन्त्रवर्णान्याकाशे स्तंभयेत्
ओं वं इति मन्त्रवर्णानि क्षाळयेत्
ओं हुं इति मन्त्र वर्णानि प्रबुद्धानि कुर्यात्
ओं फट् इति मन्त्र वर्णान्यभिमुखानि कुर्यात्"

एवं मंत्राक्षराणि पृथक् पृथक् संस्कृत्य **'ओं ओं'** इत्याहत्य, मन्त्राक्षराणि सर्वाण्येकदैव विशोधयेत् । इति मन्त्रशुद्धिं कृत्वा, अष्टोत्तरशतं वा, अष्टाविंशति वा, अष्टवारं वा बीजाद्यन्तसंपुटितं जपेत् ।।

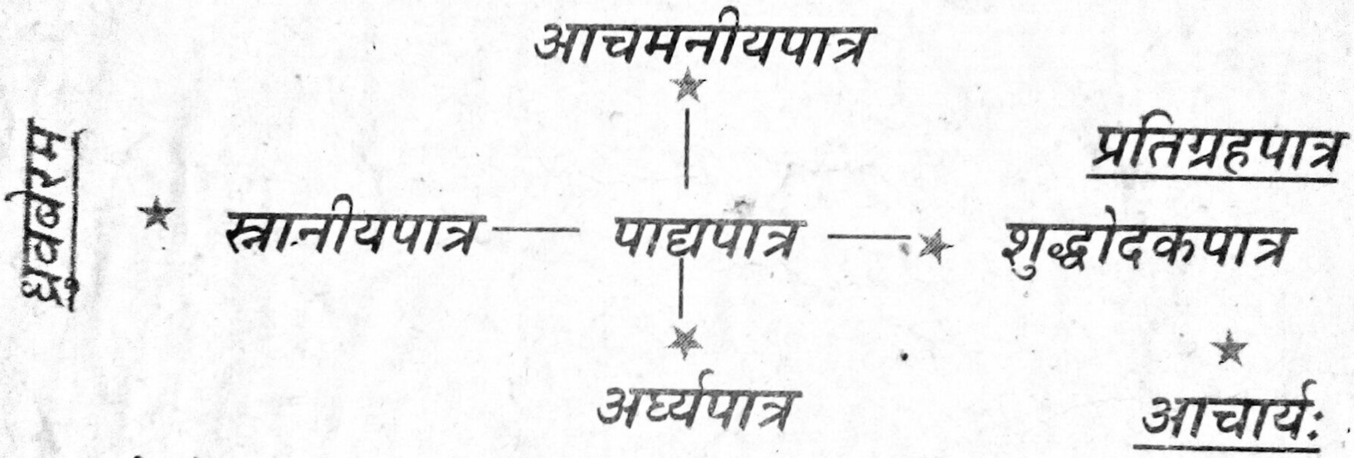
★ *द्विशीर्षकं सप्तहस्तं त्रिपादं सप्तजिह्वकम् ।*
वरदं शक्तिपाणिं च बिभ्राणं स्रुक्स्रुवौ तथा ।।
अभीतिदं चर्मधरं वामेचाज्यधरं करे ।

❖ बाह्ययागः ❖

ततः प्रणवेन जलपूरितां गळन्तिकां (आत्मनः वामे) भगवतः दक्षिणे पार्श्वे विनिवेश्य, 'ओं नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्' इत्यर्घ्यादिपात्राणि पूजाद्रव्याणि च प्रक्षाल्य, भगवतः पुरतः -

पंचपात्रनिवेशनम्

मध्ये पाद्यपात्रं, भगवतः दक्षिणतः अर्घ्यपात्रं, वामतः आचमनीयपात्रं, भगवतः पाद्यपात्रस्य मध्ये स्नानपात्रं, भगवतः पाद्यपात्रस्य चाग्रे प्राग्भागे शुद्धोदकपात्रं च विन्यस्य, प्रणवेन गाळितं-जलेनापूर्य, **'ओं'** इति पात्राणि स्पृशेत् ।



१. **अर्घ्यपात्रे** - कुशाग्र, अक्षत, पुष्प, फल, चंदन, तिल, सिद्धार्थ, यवान् निक्षिप्य.

२. **पाद्यपात्रे** - तिल, दूर्वा, विष्णुपर्णी, श्यामाक, पद्ममक्षतान्निक्षिप्य,

३. **आचमनपात्रे** - एला, लवंग, तक्कोल, कर्पूर, जाजि, चंदन, पुष्पाणि निक्षिप्य,

४. **स्नानपात्रे** - गंध, सर्वौषधी★, रत्न, बीज, फल, कुश, तिल, अक्षत, दधि, क्षीर, घृत रजनीति द्वादशांगानि निक्षिप्य.

५. **शुद्धोदकपात्रे** - तिल-तुलस्यौ निक्षिपेत्, ततो द्रव्य शुद्धिं कुर्यात् ।

★ *क्राष्ठ मांसी हरिद्रे द्वे मुराशैलेयचंपकाः ।*
वचा कच्चोरमुस्ताश्च सर्वौषध्यः प्रकीर्तिताः ।।

द्रव्यशुद्धिः

स्वस्य दक्षिणे हस्ते "**ओं रं द्वादशाराय चक्राय नमः**" इति तन्मध्ये "**ओं हं सूर्याय नमः**" इति चक्रसूर्यौ ध्यात्वा, दाहनमुद्रया दीप्तैः तद्रश्मिभिः द्रव्याणि निश्शेषं भस्मीभूतानि ध्यात्वा ।

स्वस्य वामकरतले - "**ओं वं षोडशदळयुताय विकस्वराय श्वेतपद्माय नमः**" इति तन्मध्ये "**ओं वं षोडशकलायुताय अमृतमयाय चन्द्रमसे नमः**" इति च पद्मचन्द्रौ ध्यात्वा, प्लावनमुद्रां प्रदर्श्य, तेन वामहस्तेन द्रव्याणि संस्पृशेत् ।

तदुत्थैरमृतांबुभिः द्रव्याणि पुनर्जातानि यागयोग्यानि च विभाव्य, हस्तयोः "**ओं नमो नारायणाय**" इति ध्यात्वा, हस्ताभ्यां "**ओं रां नमः पराय विश्वात्मने**" इति प्रत्येकशः पूजाद्रव्याणि सकृत्सकृत्संस्पृश्य, "*ओं नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्* ।" इति विष्णुगायत्र्याऽभिमन्त्र्य, "**ओं स्वी सुरभ्यै नमः**" इति सुरभिमुद्रां प्रदर्श्य, तद्दुग्धेन पात्राणि पूरितानि विचिन्त्य, "**ओं श्रीं श्रियै अर्घ्यरूपिण्यै नमः**"।। इति अर्घ्यं परिकल्पयामि, "**ओं गंगायै पितृप्रियकरायै पाद्यरूपिण्यै नमः**" इति पाद्यं परिकल्पयामि, "**ओं सरस्वत्यै आचमनीयात्मिन्यै नमः**" इति आचमनीयं परिकल्पयामि, "**ओं वरुणाय स्नानीयात्मने नमः**" इति स्नानीयं परिकल्पयामि, "**ओं शान्त्यै शुद्धोदकरूपिण्यै नमः**" इति शुद्धोदकं परिकल्पयामि, इति प्रत्येकशः पात्राणि संस्पृश्य, किंचिज्जलमर्घ्यपात्रात् ★ अन्यपात्रे गृहीत्वा, वामपार्श्वे वेदिकोपरि निधाय, तस्मिन् वैकुंठात् ★★ "**ओं विरजानद्यै नमः**

★ *अलग से एक छोटे पात्र को रक्खें । अथवा उद्धरणी से करें ।।*

★★ *श्रीप्रश्नसंहिता से स्वीकार किया गया ।*

आगच्छागच्छे" ति विरजानदीं ध्यात्वा, आगतां तामभ्यर्च्य, वामहस्ते निधाय, **'ओं नमो नारायणाय'** इति सप्तवारमभिमन्त्र्य, अर्घ्यादिपात्रेषु किंचित्किंचिज्जलं निक्षिप्य, शेषजलेन **"ओं रं सहस्त्रार हुं फट्"** इति द्रव्याणि आत्मानं च कूर्चेन प्रोक्षयेत् ।।

१. मन्त्रासनम्

योगपीठार्चनम्

भगवतः पीठे अधस्तादुपर्युपरि -

ओं प्रूं ढ्रूं आधारशक्त्यै नमः
ओं ह्रूं कूर्मकालाग्नये नमः
ओं हां अनन्ताय नमः
ओं धं धरण्यै नमः

आग्नेयादिकोणेषु -

आग्नेये - ***ओं धं धर्माय नमः***
नैरुत्यां - ***ओं ज्ञं ज्ञानाय नमः***
वायव्ये - ***ओं वं वैराग्याय नमः***
ऐशान्ये - ***ओं ऐं ऐश्वर्याय नमः***, इत्येतान् सितवर्णान् ध्यात्वा

ततो प्रागादि दिक्षु -

प्राग्भागे - ***ओं अं अधर्माय नमः***
दक्षिणे - ***ओं अं अज्ञानाय नमः***
पश्चिमे - ***ओं अं अवैराग्याय नमः***
उत्तरे - ***ओं अं अनैश्वर्याय नमः***

इत्येतान् अरुणरूपिणः ध्यात्वाः

सर्वानेतान् पुरुषाकृतीन् चतुर्बाहून् सिंहवक्त्रान् अंजलिपुटान् हस्ताभ्यां योगपीठं बिभ्राणान् ध्यात्वा ।

पीठमध्ये -

ओं हूं सदाशिवाय पादरूपिणे नमः इति पांडुरवर्णं पंचविंशतिशिरोभिः योगपीठं बिभ्राणं सदाशिवं ध्यायेत् ।

योगपीठोपरि पुनःप्रागादि :- कीलारूपेण

प्राग्भागे - *ओं ऋं ऋग्वेदाय नमः*

दक्षिणे - *ओं यं यजुर्वेदाय नमः,*

पश्चिमे - *ओं सं सामवेदाय नमः*

उत्तरे - *ओं अम् अथर्वणवेदाय नमः* इति ध्यात्वा

ततो पाशरूपेण -

ओं फं भौतिकाहंकाराय नमः

ओं प्यूं तैजसाहंकाराय नमः

ओं वौं वैकारिकाहंकाराय नमः

तेषामुपरि सूत्ररूपेण -

ओं सं सत्वगुणाय नमः

ओं रं रजोगुणाय नमः

ओं तं तमोगुणाय नमः

तदुपरि तूलिकारूपेण -

ओं तूलिकारूपेभ्यो पृथिव्यप्तेजो-वायुराकाशात्मभ्यो हुं फट् नमः

ततो. आस्तरणरूपेण -

ओं मं आस्तरणरूपाय जीवात्मने नमः

उपर्युपरि -

ओं रां वह्निमंडलाय नमः

ओं सां सोममण्डलाय नमः

ओं हां सूर्यमण्डलाय नमः

तदुपरि- "ओं द्वादशदळयुताय कर्णिकाकेसरयुताय अव्यक्त पद्माय नमः", "ओं भद्रासनाय नमः", इति भद्रासनं कल्पयित्वा।

पीठस्य दक्षिणपार्श्वे -

ओं कं ब्रह्मणे नमः,

ओं अं विष्णवे नमः

ओं ईं ईशानाय नमः इति ध्यात्वा ।

पीठस्योत्तरे पार्श्वे -

ओं सनत्कुमाराय नमः

ओं सनकाय नमः

ओं सनंदनाय नमः

पीठस्य पश्चिमे पार्श्वे -

ओं दुर्गायै नमः

ओं विघ्नेशाय नमः

ओं नारदाय नमः

पीठस्य वायव्ये कोणे -

ओं अस्मद्गुरुभ्यो नमः

ओं अस्मत्परमगुरुभ्यो नमः

ओं अस्मत्परमेष्ठिगुरुभ्यो नमः

ओं अस्मत्सर्वगुरुभ्यो नमः इति च ध्यात्वा ।

सर्वान् गंध, पुष्प, धूप, दीपैश्चतुर्भिरुपचारैरभ्यर्चयेत् ।

❖❖❖❖❖

भगवदाराधनारम्भः

अथ ध्रुवबेरे - भगवंतं प्रणम्य, किंचिदुत्थाय **'स्वागतं भगवते'** इत्युक्त्वा, स्वागतमुद्रां प्रतिमामुद्रां च प्रदर्श्य, **'ओं नमो नारायणाय सुमुखो भव'** इति प्रार्थ्य, साम्मुख्यमुद्रां प्रदर्श्य, **'ओं नमो नारायणाय'** इति सपर्यासनं दद्यात् ।।

आवाहनपात्रमद्भिः प्रक्षाल्य, **'ओं नमो नारायणाय'** इति अद्भिरापूर्य, हस्ताभ्यां ललाटसममुद्धृत्य, तस्मिन् ध्रुवबिंबाद्भगवंतं **'ओं नमो नारायणाय आगच्छ'** इति चतुर्वारमुच्चार्य, तत्तोयेन कर्मार्चामूर्ध्नि कूर्चेन सिंचेत्, मूलबिंबात् दीपाद्दीपान्तरमिव आगतं देवं कर्मार्चायां विभाव्य, प्रणम्य, किंचिदुत्थाय **'स्वागतं भगवते'** इति स्वागतमुद्रां प्रतिमामुद्रां च प्रदर्श्य ।

"स्वामिन्! सर्वजगन्नाथ! यावत्पूजावसानकम् ।
तावन्मद्भक्तिभावेन बिंबेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु ।।

इति सन्निधिं प्रार्थ्य, प्रार्थनामुद्रां प्रदर्श्य, **'ओं नमो नारायणाय सुमुखो भव'** इति साम्मुख्यमुद्रां प्रदर्श्य **'ओं नमो नारायणाय'** इति सपर्यासनं दद्यात् ।।

कर्मार्चायां मन्त्रन्यासः - *(न्यासमुद्रां सर्वत्र कुर्यात्)*

ओं रां ओम् इति भगवतः नाभौ
ओं यं ओम् इति भगवतः मेहने
ओं णां ओम् इति भगवतः जंघयोः
ओं यं ओम् इति भगवतः पादयोः
ओं ओं ओम् इति भगवतः मूर्ध्नि
ओं नं ओम् इति भगवतः नेत्रयोः

ओं मों ओम् इति भगवतः मुखे

ओं नां ओम् इति भगवतः हृदये च स्थितिन्यासं कृत्वा।

कर्मार्चायां षडंगन्यासः -

ओं क्रुद्धोल्काय हृदयाय नमः इति हृदयमुद्रया भगवतः हृदये

ओं महोल्काय शिरसेस्वाहा इति शीर्षमुद्रया भगवतः शिरसि

ओं वीरोल्काय शिखायै वषट् इति शिखामुद्रया भगवतः शिखायाम्

ओं द्युल्काय कवचाय हुं इति कवचमुद्रया भगवतः भुजयोः

ओं तेजोल्काय नेत्राभ्यां वौषट् इति नेत्रमुद्रया भगवतः नेत्रयोः

ओं सहस्त्रोल्काय अस्त्राय फट् इत्यस्त्रमुद्रया भगवतः शिरःपरितःन्यस्य

किरीट, कुंडल, वनमाला, श्रीवत्स, कौस्तुभ, चक्र, शंख, पद्म, गदा, गरुडमुद्राः प्रदर्श्य ।

ओम् अर्चत प्रार्चत प्रियमेधासो अर्चतार्चन्तु पुत्रका।

उतपुरन्न धृष्ण्वर्चतार्चत प्रार्चत ।

इति साम्ना पुष्पांजलिं समर्प्य ।

विभो! सकललोकेश! विष्णो! जिष्णो! प्रभो! हरे! ।

त्वां भक्त्या पूजयाम्यद्य भोगैरर्घ्यादिभिः क्रमात् ।।

इति भक्तिनम्रेण शिरसा विज्ञाप्य, अर्घ्यमेकवारं भगवतः मूर्ध्नि, पाद्यं द्विवारं पादारविंदयो, आचमनीयं त्रिवारं मुखे च । प्रथमतः ध्रुवबेरे, ततः कर्मार्चायां च समर्प्य, विनियुक्तजलं प्रतिग्रहपात्रे निक्षिप्य, दधिमधुसम्मिश्रं मधुपर्कं निवेद्य, साष्टांगं प्रणम्य ।

दासोऽहं ते जगन्नाथ! सपुत्रादिपरिग्रहः ।

प्रेष्यं प्रशाधि कर्तव्ये मां नियुङ्क्ष्व हिते सदा ।।

इति भगवंतं विज्ञाप्य, परिवारार्चनं कुर्यात् ।

परिवारार्चनम्

योगासनाब्ज द्वादशदळेषु प्रागादिक्रमेण -

ओं श्रीवत्सायै नमः
ओं वनमालायै नमः
ओं योगमायायै नमः
ओं वैष्णव्यै नमः
ओं विमलायै नमः
ओं सृष्ट्यै नमः
ओं उत्कर्षिण्यै नमः
ओं प्रज्ञायै नमः
ओं सत्यायै नमः
ओं ऐशान्यै नमः
ओं अनुकम्पायै नमः
ओं पितामह्यै नमः १२

अधस्तात्पूर्वोक्तसूर्यमंडलरूप प्रथमावरणस्य परितः प्रागादि-

ओं व्याप्त्यै नमः
ओं कान्त्यै नमः
ओं तृप्त्यै नमः
ओं श्रद्धायै नमः
ओं विद्यायै नमः
ओं जयायै नमः
ओं क्षमायै नमः
ओं शान्त्यै नमः

इत्येताः चामरधारिणीः ध्यात्वा ।

तस्याधस्तात्पूर्वोक्तसोममंडलरूप द्वितीयावरणस्य परितः प्रागादि-

ओं शंखिने नमः
ओं चक्रिणे नमः
ओं गदिने नमः
ओं पद्मिने नमः
ओं मुसलिने नमः
ओं खड्गिने नमः
ओं शार्ङ्गिणे नमः
ओं वज्रिणे नमः ८

इत्येतान् पुरुषान् आयुधधरान् ध्यात्वा ।

तस्याधस्तात्पूर्वोक्तवह्निमंडलरूप तृतीयावरणस्य परितः प्रागादि-

ओम् इन्द्राय नमः
ओम् अग्नये नमः
ओम् यमाय नमः
ओम् निरृतये नमः
ओम् वरुणाय नमः
ओम् वायवे नमः
ओम् सोमाय नमः
ओम् ईशानाय नमः ८

इति ध्यात्वा ।

भगवदभिमुखे तृतीयावरणस्य बहिः -

ओं ताक्ष्र्याय नमः

भगवदभिमुखे तृतीयावरणस्य ऐशान्याम् -

ओं विष्वक्सेनाय नमः

इति च एतान् प्रांजलीन् भगवदभिमुखं स्थितान् ध्यात्वा, गंध-पुष्प-धूप-दीपैश्चतुर्भिरुपचारैरभ्यर्चयेत् ।

तस्याधस्तात्पूर्वोक्तसोममंडलरूप द्वितीयावरणस्य परितः प्रागादि-

ओं शंखिने नमः
ओं चक्रिणे नमः
ओं गदिने नमः
ओं पद्मिने नमः
ओं मुसलिने नमः
ओं खड्गिने नमः
ओं शार्ङ्गिणे नमः
ओं वज्रिणे नमः ८

इत्येतान् पुरुषान् आयुधधरान् ध्यात्वा ।

तस्याधस्तात्पूर्वोक्तवह्निमंडलरूप तृतीयावरणस्य परितः प्रागादि-

ओम् इन्द्राय नमः
ओम् अग्नये नमः
ओम् यमाय नमः
ओम् निरृतये नमः
ओम् वरुणाय नमः
ओम् वायवे नमः
ओम् सोमाय नमः
ओम् ईशानाय नमः ८

इति ध्यात्वा ।

भगवदभिमुखे तृतीयावरणस्य बहिः -

ओं तार्क्ष्याय नमः

भगवदभिमुखे तृतीयावरणस्य ऐशान्याम् -

ओं विष्वक्सेनाय नमः

इति च एतान् प्रांजलीन् भगवदभिमुखं स्थितान् ध्यात्वा, गंध-पुष्प-धूप-दीपैश्चतुर्भिरुपचारैरभ्यर्चयेत् ।

२. स्नानासनम्

(नित्यस्नपनम् ★)

ओम् इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्य पा॑ँसुरे । इति

ओम् त्रीणि पदा विचक्रमे विष्णुर्गोपा अदाभ्यः ततो धर्माणि धारयन् ।। इति च द्वाभ्यां भगवतः स्नानासनार्थं पादुके दत्वा ।

ओम् उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते । देवयं तस्त्वेमहे । उपप्रयन्तु मरुतस्सुदानवः । इंद्रप्राशूर्भवासचा ।।

इति देवमुत्थाप्य, स्नानपीठं प्रापय्य ।

ओम् भद्रं कर्णेभिश्शृणुयाम देवाः । भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः । स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवा॑ँसस्तनूभिः । व्यशेम देवहितं यदायुः ।।

इति स्नानवेदिकायां निवेश्य (स्नपनबेराभावे) पात्रस्थ-सालग्राममूर्तीः निवेश्य, स्नानोपचारान् समर्पयेत् ★।

★ 'सालग्रामं च शंखं च बिम्बेन सह नार्चयेत्' औपगायन-पारमेश्वर संहिताओं में यह प्रमाणखण्ड मिलता है । स्नानबेर (मूर्ति) के साथ सालग्राममूर्तियों का उपचार नहीं करना चाहिए । यदि सालग्रामों के साथ स्नपनबेर भी मौजूद हो तो पहले सालग्रामों का अभिषेक समाप्त कर के बाद में यथाविधि स्नपनबेर का अभिषेक करना चाहिए । अथवा सालग्राममूर्तियों का भी अभिषेक करना चाहिए । दोनों को मिला कर करना नहीं ।।

ओम् भूर्भु वस्सुवः तत्सवितुर्वरेण्यं

भर्गो देवस्य धीमहि । धियोयोनः प्रचोदयात् ।।

इति सावित्र्या मूर्ध्नि अर्घ्यं समर्प्य ।

ओम् त्रीणि पदा विचक्रमे विष्णुर्गोपा अदाभ्यः ।

ततो धर्माणि धारयन्न् ।।

इति द्विवारं पादयोः पाद्यं समर्प्य ।

ओम् आपः पुनंतु पृथिवीं पृथिवी पूता पुनातु माम्।

पुनंतु ब्रह्मणस्पतिर्ब्रह्मपूता पुनातु माम् ।।

इति त्रिवारं मुखे आचमनीयं समर्प्य ।

ओम् तद्विष्णोः परमं पद सदा पश्यन्ति सूरयः ।

दिवीव चक्षुराततम् ।।

इति तुलसीकाष्ठेन दन्तधावनं कृत्वा ।

ओम् नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि । तन्नो

विष्णुः प्रचोदयात् ।।

इति जिह्वानिर्लेखनं कृत्वा ।

*ओम् द्वासुपर्णौ सयुजौ सखायौ समानं वृक्षं

---

* ... (ऋग्वेदीय) मन्त्र को गण्डूषण उपचार के लिए पूर्वाचार्यों ने आदरपूर्वक लिया है ।

परिषस्वजाते। तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्यनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति।।

इति गंडूषाचमनं दत्वा ।

ओम् नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्

विष्णुगायत्र्या मुखप्रक्षाळनं कृत्वा ।

ओम् वामदेव्येन साम्ना वषट्कारेण वज्रेणापरजानिन्द्रेण सयुजो वयꣳ सासह्याम पृतन्यतः । घ्नन्तो वृत्राण्य प्रति।।

इत्यभ्यंजनं कृत्वा ।

ओम् विष्णोर्नुकं वीर्याणि प्रवोचं यः पार्थिवानि विममेरजाꣳसि यो अस्कभाय दुत्तरꣳ सदस्थं विचक्रमाणस्त्रेधोरुगायो विष्णो रराटमसि विष्णोः पृष्ठमसि विष्णोश्नप्त्रेस्थो विष्णो स्यूरसि विष्णोर्ध्रुवमसि वैष्णवमसि विष्णवेत्वा।।

इत्यामलकवारिणा उद्वर्तनं कृत्वा ।

ओम् प्रतद्विष्णुस्तवते वीर्याय । मृगोनभीमः कुचरोगिरिष्ठाः। यस्योरुषु त्रिषु विक्रमणेषु । अधिक्षियन्ति भुवनानि विश्वा ।।

इति नतेविष्णुरिति च द्वाभ्यां वारिणा संक्षाल्य ।

ओम् नते विष्णो जायमानो नजातो देवमहिम्नः परमन्तमाप। उदस्तभ्नानाकमृष्वं बृहन्तं दाधर्थ प्राचीं ककुभं पृथिव्याः।।

ओम् आपोहिष्ठामयो भुवस्तान ऊर्जे दधातन । महेरणाय चक्षसे । योवश्शिवतमोरसस्तस्य भाजयतेहनः। उशतीरिव मातरः । तस्मा अरंगमामवो यस्यक्षयाय जिन्वथ । आपोजनयथाचनः ।।

इति तिसृभिरभिषिच्य ।

ओम् अतो देवा अवन्तु नो यतो विष्णुर्विचक्रमे । पृथिव्यास्सप्तधामभिः ।।

इति कनककंकतेन केशान् संशोध्य ।

ओम् हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजां । चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो ममावह ।।

इति हरिद्रालेपनं कृत्वा ।

ओम् हिरण्यवर्णाश्शुचयः पावका यासुजातः कश्यपोयास्विन्द्रः । अग्निं या गर्भं दधिरे विरूपास्तान आपश्शग्ग् स्योना भवन्तु। यासाꣳ राजा वरुणो याति मध्ये सत्यानृते अवपश्यन् जनानाम् । मधुश्चुतश्शुचयो

याः पावकास्तान आपश्शग्ग्स्योना भवन्तु । यासां देवा दिवि कृण्वन्ति भक्षं या अन्तरिक्षे बहुधा भवन्ति । याः पृथिवीं पयसोन्दन्ति शुक्रास्तान आपश्शग्ग्स्योना भवन्तु। शिवेनमाचक्षुषा पश्यतापशिशवया तनुवोपस्पृशत त्वचं मे। सर्वाꣳ अग्नीꣳ रप्सुषदो हुवेवो मयि वर्चो बलमोजो निधत्त।।

इति चतसृभिः गंधवारिणा संक्षाल्य, पुनः

"ओम् नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि ।
तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् ।

इति विष्णुगायत्र्या कुंकुमपुष्पेणानुलिप्य ।

ओम् पवमानस्सुवर्जनः । पवित्रेण विचर्षणिः । यः पोतास पुनातु मा । पुनंतु मा देवजनाः । पुनंतु मनवो धिया। पुनंतु विश्व आयवः । जातवेदः पवित्रवत् । पवित्रेण पुनाहि मा । शुक्रेण देवदीद्यत् । अग्ने क्रत्वा क्रतूꣳरनु । यत्ते पवित्रमर्चिषि । अग्नेविततमन्तरा। ब्रह्म तेन पुनीमहे । उभाभ्यां देव सवित: । पवित्रेण सवेन च। इदं ब्रह्म पुनीमहे । वैश्वदेवी पुनती देव्यागात् । यस्यै बह्वीस्तनुवो वीतपृष्ठाः । तयामदन्तस्सधमाद्येषु । वयग्ग्स्याम पतयो रयीणाम् । वैश्वानरो रश्मिभिर्मा पुनातु वातः प्राणेनेषिरोमयोभूः । द्यावापृथिवी

पयसा पयोभिः । ऋता वरी यज्ञियेमा पुनीताम् । बृहद्भिस्सवितस्तृभिः । वर्षिष्ठैर्देवमन्मभिः । अग्नेदक्षैः पुनाहि मा । येन देवा अपुनत। येनापो दिव्यङ्कशः । तेन दिव्येन ब्रह्मणा । इदं ब्रह्म पुनीमहे । यः पावमानीरध्येति । ऋषिभिस्संभृत ँ रसम्। सर्व ँ सपूतमश्नाति । स्वदितं मातरिश्वना । पावमानीर्यो अध्येति । ऋषिभिस्संभृत ँ रसम्। तस्मै सरस्वती दुहे। क्षीर ँ सर्पिर्मधूदकम् । पावमानी स्वस्त्ययनीः। सुदुघाहिपयस्वतीः । ऋषिभिस्संभृतोरसः। ब्राह्मणेष्वमृत ँ हितम् । पावमानीर्दिशन्तु नः । इमंल्लोकमथो अमुम्। कामान्त्समर्थयन्तुनः । देवीर्देवैस्समाभृताः । पावमानी स्वस्त्ययनीः । सुदुघाहिघृतश्चुतः । ऋषिभिस्संभृतोरसः। ब्राह्मणेष्वमृत ँ हितम् । येन देवाः पवित्रेण । आत्मानं पुनते सदा। तेन सहस्रधारेण। पावमान्यः पुनंतु मा । प्राजापत्यं पवित्रम्। शतोद्याम ँ हिरण्मयम् । तेन ब्रह्मविदो वयं । पूतं ब्रह्म पुनीमहे । इन्द्रस्सुनीती सह मापुनातु । सोमस्स्वस्त्या वरुणस्समीच्या। यमो राजा प्रमृणाभिः पुनातु मा । । जातवेदा मोर्जयन्त्या पुनातु ।।

इति पवमानीभिः ।

ओम् ब्रह्मजज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमतस्सुरुचो वेन आवः। सबुध्निया उपमा अस्य विष्ठास्सतश्चयोनिमसतश्च विवः।।

ओम् कयानश्चित्र आभुव दूती सदावृधस्सखा । कया शचिष्ठयावृता । इतिचाभिषिच्य ।

ओम् भूर्भुवस्सुवः । तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियोयोनः प्रचोदयात् । इत्यर्घ्यं समर्प्य ।

ओम् त्रीणि पदा विचक्रमे विष्णुर्गोपा अदाभ्यः । ततो धर्माणि धारयन्न् ।।

इति द्विवारं पादयोः पाद्यं समर्प्य ।

ओम् आपः पुनन्तु पृथिवीं पृथिवी पूता पुनातु माम् ।
पुनन्तु ब्रह्मणस्पतिर्ब्रह्मपूता पुनातु माम् ।।

इति त्रिवारं मुखे आचमनीयं दत्वा, धूपदीपौ च संदर्श्य ।

ओम् भूर्भुवस्सुवः । तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियोयोनः प्रचोदयात् ।

इति गळन्तिकातीर्थेन परिषिच्य । सहस्रधारया पुरुषसूक्तेन स्नापयेत् ।।

१ ओम् सहस्रशीर्षा पुरुषः । सहस्राक्षस्सहस्रपात् ।
सभूमिं विश्वतो वृत्वा । अत्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ।
२ पुरुष एवेदꣳ सर्वम् । यद्भूतं यच्च भव्यम् ।
उतामृतत्वस्येशानः । यदन्नेनातिरोहति ।
३ एतावानस्य महिमा । अतोज्यायाग्श्चपूरुषः । पादोस्य
विश्वा भूतानि । त्रिपादस्यामृतं दिवि ।

४ त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः । पादोस्येहा भवात्पुनः ।
ततोविष्वङ्व्यक्रामत् । साशनानशने अभि ।
५ तस्माद्विराडजायत । विराजो अधिपूरुषः । सजातो
अत्यरिच्यत । पश्चाद्भूमिमथोपुरः ।
६ यत्पुरुषेण हविषा । देवा यज्ञमतन्वत । वसन्तो
अस्यासीदाज्यम् । ग्रीष्म इध्मश्शरद्धविः ।
७ सप्तास्यासन्परिधयः । त्रिस्सप्त समिधः कृताः । देवा
यद्यज्ञं तन्वानाः । अबध्नन्पुरुषं पशुम् ।
८ तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन्न् । पुरुषं जातमग्रतः । तेन देवा
अयजन्त । साध्या ऋषयश्च ये ।
९ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः । संभृतं पृषदाज्यं । पशूग्स्ताग्
श्चक्रे वायव्यान् । आरण्यान् ग्राम्याश्च ये ।
१० तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः । ऋचस्सामानि जज्ञिरे । छंदाꣳसि
जज्ञिरे तस्मात् । यजुस्तस्मादजायत ।।
११ तस्मादश्वा अजायन्त । येकेचोभयादतः । गावोह
जज्ञिरे तस्मात् । तस्माज्जाता अजावयः ।।
१२ यत्पुरुषं व्यदधुः । कतिधा व्यकल्पयन्न् । मुखं किमस्य
कौ बाहू । कावूरूपादा वुच्येते ।।
१३ ब्राह्मणोस्य मुखमासीत् । बाहू राजन्यः कृतः । ऊरू
तदस्य यद्वैश्यः । पद्भ्याꣳ शूद्रो अजायत ।।

१४ चंद्रमा मनसो जातः । चक्षोस्सूर्यो अजायत ।
मुखादिन्द्रश्चाग्निश्च । प्राणाद्वायु रजायत ।।

१५ नाभ्या आसीदन्तरिक्षं । शीर्ष्णोद्यौस्समवर्तत । पद्भ्यां
भूमिर्दिशः श्रोत्रात् । तथा लोका॑ अकल्पयन्न् ।

१६ वेदाहमेतं पुरुषं महांतम् । आदित्यवर्णं तमसस्तु पारे ।
सर्वाणि रूपाणि विचित्य धीरः । नामानि कृत्वाभि
वदन् यदास्ते ।

१७ धातापुरुस्ताद्य मुदाजहार । शक्रः प्रविद्वान् प्रदिशश्चतस्त्रः ।
तमेवं विद्वानमृत इह भवति । नान्यः पन्था अयनाय
विद्यते ।

★१८ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवाः । तानि धर्माणि
प्रथमान्यासन्न् । तेह नाकं महिमानस्सचन्ते । यत्र पूर्वे
साध्यास्संति देवाः ।

१९ अद्भ्यस्संभूतः पृथिव्यै रसाच्च । विश्वकर्मण
स्समवर्तताधि । तस्यत्वष्टाविदधद्रूपमेति । तत्पुरुषस्य
विश्वमाजानमग्रे ।

★ पुरुषसूक्त में १६ ऋचायें ही उपचारों के लिए लिए जाते हैं । इस पेज में १६-१७ मन्त्रो को छोड कर १८ वां मन्त्र को मिलाने पर १६ हो जाते हैं । ये भ्रम न हो कि- १६ से ज्यादे मन्त्र है । बाकी मन्त्र भी अनुसन्धान में हैं ।।

२० वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम् । आदित्यवर्णं तमसः परस्तात्।
तमेवं विद्वानमृत इह भवति । नान्यः पंथा विद्यतेयनाय।

२१ प्रजापतिश्चरति गर्भे अंतः । अजायमानो बहुधा
विजायते। तस्य धीराः परिजानंति योनिम् । मरीचीनां
पदमिच्छन्ति वेधसः ।

२२ यो देवेभ्य आतपति । यो देवानां पुरोहितः । पूर्वो यो
देवेभ्यो जातः । नमो रुचाय ब्राह्मये ।

२३ रुचं ब्राह्मं जनयंतः । देवा अग्रे तदब्रुवन्न् । यस्त्वैवं
ब्राह्मणो विद्यात् । तस्य देवा असन्वशे ।

२४ ह्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यौ । अहोरात्रे पार्श्वे । नक्षत्राणि
रूपम् । अश्विनौ व्यात्तम् । इष्टं मनिषाण । अमुं
मनिषाण। सर्वं मनिषाण ।

ओम् शान्ति श्शान्ति श्शान्तिः ।।

ओम् तच्छं योरावृणीमहे । गातुं यज्ञाय । गातुं
यज्ञपतये । दैवी स्वस्तिरस्तु नः । स्वस्तिर्मानुषेभ्यः।
ऊर्ध्वं जिगातुभेषजम् । शन्नो अस्तु द्विपदे । शं चतुष्पदे।
ओं शान्ति श्शान्ति श्शान्तिः ।।

ओं अग्निर्मूर्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयम् ।
अपाग् रेताꣳसि जिन्वति ।।

इति प्लोतवस्त्रेण अङ्गाम्बु निर्हृत्य ।

ओं मूर्धानं दिवो अरतिं पृथिव्या वैश्वानरमृताय जातमग्निम् । कवि॑ सम्राजमतिथिं जनानामासन्नापात्रं जनयन्त देवाः ।।

★ इत्यगरुजेन धूपेन आर्द्रान् केशान् संशोष्य, निर्मलवस्त्रद्वयं समर्प्य

'ओम्' इति प्रणवेन ब्रह्मसूत्रम् उत्तरीयञ्च समर्प्य

सावित्र्याऽर्घ्यं, त्रीणिपदेति पाद्यं द्विः

आपः पुनन्त्वित्याचमनीयं त्रिः दद्यात् ।।

✪✪✪✪✪

३ अलङ्कारासनम्

अथ- ओम् इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्य पा॑ सुरे ।

ओम् त्रीणि पदा विचक्रमे विष्णुर्गोपा अदाभ्यः । ततोधर्माणि धारयन्न् ।

इति द्वाभ्यां पादुके समर्प्य ।

अलंकारासने देवं संस्थाप्य पुरातनं वस्त्रद्वयं **'ओम् भूः'** इति

व्याहृत्या परिहृत्य, ओं नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि। तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् इति नूतनवस्त्राभ्यामलंकृत्य, सुखासीनाय देवाय पुनः सावित्र्या अर्घ्यं, त्रीणिपदेति द्विःपाद्यं, आपः पुनन्त्विति त्रिः आचमनीयं समर्प्य ।।

ओं मूर्धानं दिवो अरतिं पृथिव्या वैश्वानरमृताय जातमग्निम् । कवि॰ सम्राजमतिथिं जनानामासन्नापात्रं जनयन्त देवाः ।।

इत्यगरुजेन धूपेन पुनःकेशान् संशोष्य ।

ओम् इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्य पा॰ सुरे ।

इति परिमळचन्दनेनानुलिप्य ।

ओम् जितंते दक्षिणतो वृषभ एधि हव्यः । इन्द्रो जयाति नपराजयाता अधिराजोराज सुराजयाति ।

इति किरीटादिसर्वाभरणैरलङ्कृत्य ।

ओम् नते विष्णो जायमानो नजातो देवमहिम्नः परमन्तमाप। उदस्तभ्नानाकमृष्वं बृहन्तं दाधर्थ प्राचीं ककुभं पृथिव्याः★ ।।

इति ललाटे ऊर्ध्वपुंड्रं परिकल्प्य ।

★ यह मन्त्र इस उपचार के लिए आचरण में है । (ऋग्वेद ७-९९-२)

ओम् तद्विष्णोः परमं पदँ सदा पश्यन्ति सूरयः । दिवीव चक्षुराततम् ।

इति पुष्पैरलङ्कृत्य ।

ओम् इरावती धेनुमतीहि भूतँ सूयवसिनी मनवे यशस्ये। व्यस्कभ्नाद्रोदसी विष्णुरेतेदाधार पृथिवीमभितो मयूखैः ।।

इति पादयोरक्षतान् समर्पयेत् ।

ओम् नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि । तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् ।

इत्यञ्जनं समर्प्य ।

'ओम् भूः' इति व्याहृत्या दर्पणं दर्शयित्वा ।

ओम् जितंते दक्षिणतो वृषभ एधि हव्यः । इन्द्रो जयाति नपराजयाता अधिराजोराज सुराजयाति ।

इत्यगुरूत्थितैः धूपयेत् ।

ओम् उद्दीप्यस्व जातवेदोपघ्नं निर्ऋतिम्मम । पशूंश्चमह्य मावह जीवनं च दिशो दश ।

इति दीपं दर्शयित्वा।

ओम् सोमꣳ राजानं वरुणमग्निमन्वारभामहे ।
आदित्यान् विष्णुꣳ सूर्यं ब्रह्माणं च बृहस्पतिम् ।।

इति मंत्रेण तिलादिमात्रादानं* देवाय दर्शयित्वा, आचार्याय दद्यात् । ततो यवनिकामपसार्य, नृत्तगीतादीनि, वैदिकैः वेदवेदाङ्गमङ्गळपाठांश्च श्रावयित्वा, तैर्दत्तानि तुलसी-पुष्पाणि गृहीत्वा केशवादिचतुर्विंशतिनामभिः अष्टोत्तरशतादिनामभिः पुष्पाणि भगवत्पादमूले समर्पयेत् । अत्र प्रातः दिव्यप्रबन्धे-तिरुप्पल्लांडु, तिरुप्पळ्ळियेळुच्चि-तिरुप्पावैगाथानामनुसंधानं संप्रदायसिद्धम् ।।

☆☆☆☆☆

४. भोज्यासनम्

अनन्तरम्- ओम् इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्यपाꣳ सुरे ।।

ओं त्रीणिपदा विचक्रमे विष्णुर्गोपा अदाभ्यः । ततोधर्माणि धारयन्न् ।।

---

* तिलान् वस्त्रं तथा हेम ताम्बूलं तण्डुलानपि ।
फलानि गव्यमाधारं गाश्च धान्यं यथावसु ।।

इति द्वाभ्यां भगवतः पादुके दत्वा, भोज्यासनं गमयित्वा, यवनिकामाच्छाद्य, सावित्र्या अर्घ्यं, त्रीणिपदेति पाद्यं, आपः पुनंत्विति आचमनीयं च समर्प्य, ततो मधुपर्कं निवेद्य, आस्यशोधनार्थं **'ओम्'** इति प्रणवेन ताम्बूलं समर्प्य, भगवत्पुरतः वेदिकां संशोध्य, सिद्धं मधुरादिरसोपेतं, सुसंस्कृतं भोज्यभक्ष्यादिकं, पक्वापक्वफलादिच, राजोपचारवत् यथाशक्ति परिकल्प्य, **'ओम् अस्त्राय फट्'** इति प्रोक्ष्य, **'ओं कवचाय हुम्'** इति परिषिच्य, **'ओम्'** इति मन्दोष्णं सुगन्धजलं हस्ते दत्वा । **'ओं रम्'** इति दाहनमुद्रया दाहयित्वा, **'ओं लम्'** इति प्लावनमुद्रया प्लावयित्वा । **'ओं यम्'** इति शोषणमुद्रया शोषयित्वा★ **'ओं स्वीं सुरभ्यै नमः'** इति सुरभिमुद्रया अमृतीकृत्य, अर्घ्यपात्रस्थं पुष्पमादाय, वामहस्तस्पृष्टदक्षिणपाणिना भगवतो धृवमूर्तेः दक्षिणहस्ते ग्रासमुद्रया -

ओं देवस्यत्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनो बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्यामाददे ।

इति द्वात्रिंशत्कबलान् समर्पयेत् । ततः पानकं पानीयं च समर्प्य, हस्तौ विशोध्य, पादौ प्रक्षाल्य, गण्डूषणं समर्प्य । आपः पुनन्त्वित्याचमनीयं समर्प्य । प्लोतवस्त्राग्रेण मुख - हस्तौ, अन्याग्रेण च पादौ समृज्य । **'ओम्'** इति प्रणवेन आस्यशोधिनीं तांबूलीं समर्पयेत् । तदनन्तरं कर्मार्चाद्यङ्गबिंबानामपि यथाक्रमं ताम्बूलान्तं निवेद्य, देवीनामपि यधाक्रमं ताम्बूलान्तं समर्पयेत्। ततश्चण्ड प्रचण्डादारभ्य महाबलिपीठाधिष्ठितपुरुषान्तं भगवन्निवेदित प्रसादं

★ *शोषण, दाहन, प्लावनमिति क्रमो यद्यप्यस्ति, अत्र तु दाहन-प्लावनान्तरमेव शोषणमिति पाद्मसंहितामनुसृत्य चर्यापादे तृतीयाध्याये -'दहन प्लावनादिके कृते.....' इति (१७४) श्लोकभावः, ('ओं यम्' इति शोषणम्)*

शिष्येण, परिचारकवरेण वा निवेदनं कारयेत् (शिष्याद्यभावे स्वयमेव जपानन्तरं निवेदयेत्) ततः बाह्याराधनांग-अष्टाक्षरमूलमंत्रजपम् अष्टोत्तरशतं ऋषिध्यान-छन्दःपूर्वकं पूर्ववदेव कुर्यात् ★✲

नित्यहोमः❖

अथ नित्यहोमाय मूलबेरादावाहनपात्रे चतुर्बाहुं, शंख-चक्र-गदा-वनमालाभिः किरीट-केयूर-हार-कटकैर्विराजितं नारायणमावाह्य। होमान्नभाजनं वस्त्रेणाच्छाद्य, मूर्ध्नि विन्यस्य, आवाहनपात्रमादाय, तूर्यघोषे प्रवर्तिते घंटानादपुरस्सरं -

ओं शं नो मित्रश्शं वरुणः शं नो भवत्वर्यमा । शं न इंद्रो बृहस्पतिः। शं नो विष्णुरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे । नमस्ते वायो । त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि । त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्म वदिष्यामि। ऋतं वदिष्यामि। सत्यं वदिष्यामि। तन्मामवतु। तद्वक्तारमवतु। अवतु मां। अवतु वक्तारम् । ओं शान्ति श्शान्ति श्शान्तिः ।

इत्युच्चरन् होमशालाद्वारे चण्डप्रचण्डगरुडान्मनसाऽभ्यर्च्य, होमशालां प्रविश्य, कुण्डस्य पश्चिमे वेदिकायां दर्भसंस्तरे आवाहन पात्रं निधाय, कुण्डस्य दक्षिणे उदङ्मुखः☆ कूर्मविष्टरे उपविश्य । प्रातः / माध्याह्निक / सायम् आराधनाङ्गनित्यहवनं करिष्ये; तदंगत्वेन अग्निप्रतिष्ठापनं करिष्ये इति संकल्प्य, प्रागायताः उदगायताः

★ ७ वें पेज में बताये गये अनुसार करना चाहीए ।

✲ यथोक्तमन्त्राणामज्ञाने षोडशोपचारान् पुरुषसूक्तेनैव समर्पयेत् ।
तस्याप्यभावे- अष्टाक्षरी, द्वादशार्णवादि मूलमन्त्रेणैकेन षोडशोपचारान् समर्पयेत् । न स्यात्कदापि पूजालोपः ।

☆ कर्मणामपि सर्वेषां देवप्राचीति कथ्यते । अध्वर्युप्राचिना कुर्यात् होमकाले विशेषतः ।।

❖ श्रीप्रश्नसंहितायाः ।

तिस्रस्तिस्रो रेखाः दर्भद्वयेन मूलमन्त्रेण उल्लिख्य । दर्भस्तंबेन अद्भिरभ्युक्ष्य । अग्निं कुंडमध्ये **'ओं रं अग्नये नमः आगच्छागच्छ'** इति निधाय, अग्न्यानयपात्रे अक्षतोदकं विसृज्य, इंधनैः **'ओं यं वायवे'** इति प्रज्वाल्य, आर्द्रपाणिना नखपृष्ठमदर्शयन् **'ओम्'** इति प्रणवेण परिसमूह्य, कुंडस्य प्रागादि -

ओं आहवनीयाय नमः
ओं गार्हपत्याय नमः
ओं दक्षिणाग्नये नमः
ओं सभ्याय नमः
ओं असदभ्याय नमः
ओं दावानलाय नमः
ओं रत्नाग्नये नमः
ओं सप्तजिह्वाय नमः

इत्यग्निमलंकृत्य । कुण्डस्योत्तरे देशे षट्कुशान् प्रागग्रान् निक्षिप्य, तेषु आज्यपात्रं★, हव्यं (चरुं), स्रुक्स्रुवौ, समिधः, कुशान्, प्रणीतां, प्रोक्षणीं, दर्वीं, व्यजनं, मेक्षणं, अक्षतान्, शुष्ककाष्ठान्, तिलांश्च द्वन्द्वशः अधोमुखान् निधाय, आत्मनः दक्षिणे पार्श्वे करकं-पुष्पभाजनं च निधाय, कुण्डस्य परितः ग्रंथीकृताग्रैः पंचभिः दर्भैः वासुदेव-संकर्षण- प्रद्युम्न-अनिरुद्धमन्त्रैः प्रागादि परिस्तृणीयात् । द्रव्याग्न्योर्मध्ये दर्भेष्वम्बु- पूरितां प्रणीतां निधाय, तस्याम् **'ओं सहस्रार हुं फट्'** इत्यभ्यर्च्य, प्रादेशसम्मितं द्विदर्भकूर्चमुत्तराग्रं प्रणीतायां विन्यस्य, त्रिभिर्दर्भैः पिधाय, आत्मनः पुरतः प्रोक्षणीं निधाय, प्रणीताजलं कूर्चेन सह प्रोक्षण्यां योजयित्वा, हस्तद्वयाङ्गुष्ठानामिकाभ्यां तत्कूर्चं गृहीत्वा, त्रिरुत्पूय, होमद्रव्याणि संप्रोक्ष्य, पात्राण्युत्तानानि कृत्वा, सपवित्रेण प्रोक्षणीजलेन-

---

★ *आज्यपात्रं चरुस्थालीं प्रोक्षणीं समिधः कुशान् । प्रणीतां तण्डुलान् तोयं परिधीन् स्रुक्स्रुवौ तथा ।। दर्वीमग्नेर्विहरणं व्यजनानि च मेक्षणम् । शुष्कं च काष्ठं घंटां च गन्धद्रव्यं च साक्षतम् ।।*

ओं सुदर्शनाय विद्महे महाज्वालाय धीमहि । तन्नश्चक्रः प्रचोदयात् ।

इति सुदर्शनगायत्र्या प्रोक्ष्य, तत्तन्नामान्युच्चरन् द्रव्याणि पात्राणि संस्पृशेत् , अवशिष्टतोयेन प्रणीतां परिषिच्य, पुनः प्रणीतामापूर्य, तस्याम्- शंखचक्रगदाशार्ङ्गनंदकादिविभूषितं वासुदेवं हृदय-कमलादावाह्य, समभ्यर्च्य, प्रणीतां कुण्डस्यैशान्ये दर्भविष्टरे निधाय, कुण्डस्य दक्षिणे द्वादशाङ्गुळायामं द्वादशदर्भविनिर्मितकूर्चं निधाय, चतुर्बाहुं साक्षमालाकमण्डलं सरस्वतीसमेतं हैमाभं चतुर्मुखं ब्रह्माणं

चतुर्मुखं चतुर्बाहुं साक्षमालाकमण्डलुम् ।
गिरा समेतं हैमाभं ब्रह्माणं तत्र चिन्तयेत् ।। इति

तत्र विचिन्त्य, ***'ओं कं ब्रह्मणे नमः'*** इदमासनम् अष्टार्घैः संपूर्णार्चनमस्तु इत्यर्चयित्वा । याज्ञीयैरिन्धनैः **'ओं सहस्त्रार हुं फट्'** इत्यस्त्रमन्त्रेण वह्निं प्रज्वाल्य, आत्मनः पुरतः दर्भेष्वाज्यपात्रं निधाय।

ओम् आप्यायस्व समेतुते विश्वतस्सोमवृष्णियं भवावाजस्य संगथे ।।

इति द्रावितं गाळितञ्च गोघृतमापूर्य, प्रणीतपात्रस्थं कूर्चं आज्यस्थाल्यां नियोज्य, अग्नेरुत्तरतोऽङ्गारान्निरूह्य, किञ्चित्पश्चिमे कोणे कुण्डाद्बहिर्निधाय, तेष्वाज्यस्थालीं निवेश्य, दर्भान् प्रज्वाल्य।

ओं सं सत्वगुणाय नमः,
ओं रं रजोगुणाय नमः,
ओं तं तमोगुणाय नमः, इति गुणमन्त्रैः त्रिः पर्यग्नीकृत्य दर्शयित्वा, उत्तरतो विसृज्य, द्वौ दर्भाग्रौ सलिलेन स्पृष्ट्वा **श्रीमन्नारायण**

चरणौ शरणं प्रपद्ये, श्रीमते नारायणाय नमः, इत्याज्ये निधाय, दर्भकांडद्वयेन नीराजनं कृत्वा, विसृज्य, कुण्डे अङ्गारान् प्रत्यूह्य, आज्यपात्रमात्मनः पुरतो निधाय, कूर्चेन त्रिरुत्पूय, कूर्चग्रन्थिं विसृज्य, अप उपस्पृश्य, प्रागग्रान् दर्भानग्नौ प्रहृत्य, आज्यं सुरभिमुद्रया अमृतीकृत्य, दर्भाष्टकेन पिधाय, चक्रमुद्रां दर्शयेत् ।

स्रुक्स्रुवौ उष्णोदकेन प्रक्षाल्य, पञ्चदर्भकृतकूर्चेन मूलं मूलेन, मध्यं मध्येन, अग्रमग्रेण च विशोध्य, अग्नौ प्रतितप्य, अद्भिः प्रोक्ष्य, उदीच्यां निधाय, कूर्चग्रन्थिं विसृज्य, तत्कूर्चमग्नौ प्रक्षिप्य, कुण्डस्य परितः प्रागादि -

१) ओम् इन्द्राय नमः २) ओम् अग्नये नमः
३) ओम् यमाय नमः ४) ओम् निरुऋतये नमः
५) ओम् वरुणाय नमः ६) ओम् वायवे नमः
८) ओम् सोमाय नमः ८) ओम् ईशानाय नमः -इत्यावाह्य

अक्षतैस्संपूज्य, स्रुवेण घृतमादाय, होमद्रव्याणि संसिच्य, मेखलायां दक्षिणतः- **ओं श्रीधराय नमः**, पश्चिमे (स्वस्य पुरतः) **ओं नारसिंहाय नमः**, उत्तरे - **ओं हयग्रीवाय नमः**, इति च परिधीन् स्पृष्ट्वा, द्वे आघारसमिधौ आग्नेयकोणे- **ओं अग्नये नमः** इति, ईशानकोणे- **ओं ईशानाय नमः** इति क्रमशः स्पृष्ट्वा, करकजलेन प्रोक्षणीमापूर्य, कुण्डस्य परितः पूर्वपरिषेचनं कुर्यात् ।

पूर्वपरिषेचनम् -

ओं अदितेनु मन्यस्व इति दक्षिणतः प्राचीनम्

ओं अनुमतेनु मन्यस्व इति पश्चादुदीचीनम्

ओं सरस्वतेनु मन्यस्व इत्युत्तरतः प्राचीनम्

ओं देवसवितः प्रसुव इति समन्ततः परिषिच्य ।

कुशकूर्चवेष्टितवामकरतले आज्यपात्रं निधाय, स्रुवेणाज्यमादाय, नैऋत्यादि ईशानान्तं, **'ओं प्रजापतये स्वाहा, प्रजापतय इदम्'** पुनः स्रुवेणाज्यमादाय, वायव्यादि आग्नेयान्तं, **'ओं इन्द्राय स्वाहा इंद्राय इदम्'** इत्याघाराहुतीः हुत्वा, अग्नेरुत्तरदेशे **'ओं सोमाय स्वाहा सोमाय इदम्'** दक्षिणपूर्वदेशे **'ओं अग्नये स्वाहा'**, मध्ये **'ओं भूस्स्वाहा'**, **'ओं भुवस्स्वाहा'**, **'ओं सुवस्स्वाहा'**, **'ओं भूर्भुवस्सुवस्स्वाहा'** इति व्याहृतिभिःहुत्वा ।।

ब्रह्माणं मनसा स्मरन् मुष्टिमुद्रया आज्यसिक्तान् पञ्चदश समिधः सकृत् जुहुयात् ।।

ततः अग्निं ध्यायेत् -

श्लो।। **एकवक्त्रं प्रवाळाभं जटामकुटमण्डितम् ।**
त्रिनेत्रं सप्तजिह्वञ्च मेषारूढं चतुर्भुजम् ।।
शंखचक्रधरं देवं बद्धाञ्जलिपुटं विभुम् ।।

इति वृद्धाग्निं ध्यात्वा, उग्रशान्त्यर्थं **'ओं नमो भगवते प्रद्युम्नाय स्वाहा'** इति प्रद्युम्नमन्त्रेण तिलैरष्टाहुतीर्हुत्वा, घृतेन **'ओम्'** इति प्रणवेन अष्टाहुतीर्हुत्वा, **'ओं नमो नारायणाय स्वाहा'** इति मूलमंत्रेण समिद्भि रष्टाहुतीर्हुत्वा ।

ओं रं अग्नये नमः गंधं गृहाण स्वाहा ।
ओं रं अग्नये नमः पुष्पं गृहाण स्वाहा ।
ओं रं अग्नये नमः धूपं गृहाण स्वाहा ।
ओं रं अग्नये नमः दीपं गृहाण स्वाहा ।

इति आज्येन जुहुयात् ।
ततः उत्तरपरिषेचनं कुर्यात् ।

उत्तरपरिषेचनम् -

अदितेऽन्वमग्ग्स्थाः इति दक्षिणतः प्राचीनम्

अनुमतेऽन्वमग्ग्स्थाः इति पश्चादुदीचीनम्

सरस्वतेऽन्वमग्ग्स्थाः इति उत्तरतः प्राचीनम्

देवसवितः प्रासावीः इति समन्ततश्च परिषिच्य ।

अग्नौ योगपीठं परिकल्प्य, आवाहनपात्रस्थं परमात्मानं योगपीठे विचिन्त्य -

अयुतायुतार्कतेजस्त्वं नारायण! जगत्पते! ।
यावद्धोमावसानं त्वं कुण्डेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु ।।

एवं संप्राथ्र्य, पश्चात् मन्त्रन्यासं ★बीजाद्यन्त संपुटितं एकैकवारं जुहुयात् -

ओं ओं ओं स्वाहा ।
ओं नं ओं स्वाहा ।
ओं मों ओं स्वाहा ।
ओं रां ओं स्वाहा
ओं यं ओं स्वाहा
ओं णां ओं स्वाहा
ओं यं ओं स्वाहा

इति प्रत्यक्षरं प्रणवसंपुटितेन मूलमन्त्रेण अष्टाहुतीर्हुत्वा, अग्नौ अर्घ्यादिनैवेद्यान्तं सकृत् आज्येन जुहुयात् ।

★ *अत्र ध्रुवबेरस्य स्थित्यासन-शयनमूर्त्यनुसारेण सृष्टि-स्थिति-संहारन्यासान् जुहुयात्। 'स्थिते देवे स्थितिन्यासः आसीने सृष्टिसंज्ञकः । शयने संहृतिन्यासः......'*

१) अर्घ्यं गृहाण स्वाहा　　५) गन्धं गृहाण स्वाहा
२) पाद्यं गृहाण स्वाहा　　६) पुष्पं गृहाण स्वाहा
३) आचमनीयं गृहाण स्वाहा　　७) धूपं गृहाण स्वाहा
४) स्नानीयं गृहाण स्वाहा　　८) दीपं गृहाण स्वाहा

ततः

नैवेद्यं गृहाण स्वाहा, इत्यष्टोपचारैर्हुत्वा, पुरुषसूक्तेन षोडशाहुतीः आज्यावसिक्तचरुणा जुहुयात् -

१ ओम् सहस्रशीर्षा पुरुषः । सहस्राक्षस्सहस्रपात् ।
सभूमिं विश्वतो वृत्वा । अत्यतिष्ठद्दशाङ्गुलग्ग् स्वाहा।

२ पुरुष एवेद ँ सर्वम् । यद्भूतं यच्च भव्यम् ।
उतामृतत्वस्येशानः । यदन्नेनातिरोहति स्वाहा ।

३ एतावानस्य महिमा । अतोज्यायाग्श्चपूरुषः । पादोस्य
विश्वा भूतानि । त्रिपादस्यामृतं दिवि स्वाहा ।

४ त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः । पादोस्येहा भवात्पुनः ।
ततोविष्वङ्व्यक्रामत् । साशनानशने अभि स्वाहा ।

५ तस्माद्विराडजायत । विराजो अधिपूरुषः । सजातो
अत्यरिच्यत । पश्चाद्भूमिमथोपुरः स्वाहा ।

६ यत्पुरुषेण हविषा । देवा यज्ञमतन्वत । वसन्तो
अस्यासीदाज्यम् । ग्रीष्म इध्मश्शरद्धविः स्वाहा ।

७ सप्तास्या सन्परिधयः । त्रिस्सप्त समिधः कृताः । देवा
यद्यज्ञं तन्वानाः । अबध्नन्पुरुषं पशुग्ग् स्वाहा ।

८ तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन्न् । पुरुषं जातमग्रतः । तेन देवा अयजन्त । साध्या ऋषयश्च ये स्वाहा ।

९ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः । संभृतं पृषदाज्यं । पशूग्स्ताग् श्चक्रे वायव्यान् । आरण्यान् ग्राम्याश्च ये स्वाहा ।

१० तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः । ऋचस्सामानि जज्ञिरे । छंदाँसि जज्ञिरे तस्मात् । यजुस्तस्मादजायत स्वाहा ।

११ तस्मादश्वा अजायन्त । येकेचोभयादतः । गावोह जज्ञिरे तस्मात् । तस्माज्ज्ञाता अजावयः स्वाहा ।

१२ यत्पुरुषं व्यदधुः । कतिधा व्यकल्पयन्न् । मुखं किमस्य कौ बाहू । कावूरूपादा वुच्येते स्वाहा ।

१३ ब्राह्मणोस्य मुखमासीत् । बाहू राजन्यः कृतः । ऊरू तदस्य यद्वैश्यः । पद्भ्याँ शूद्रो अजायत स्वाहा ।

१४ चंद्रमा मनसो जातः । चक्षोस्सूर्यो अजायत । मुखादिन्द्रश्चाग्निश्च । प्राणाद्वायु रजायत स्वाहा ।

१५ नाभ्या आसी्न्तरिक्षं । शीर्ष्णोद्यौस्समवर्तत । पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात् । तथा लोकाँ अकल्पयन् स्वाहा।

१६ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवाः । तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्न्। तेह नाकं महिमानस्सचन्तें । यत्र पूर्वे साध्यास्संति देवाः स्वाहा।

ततः जपार्धमपि सकृत् ओं नमो नारायणाय स्वाहा । इत्याज्येन जुहुयात् ।

पूर्णाहुतिः

ततः घृताप्लुतं कुक्कुटाण्डप्रमाणं चरुपिण्डं स्रुग्गर्ते समित्-पुष्प-दर्भ सहितं निक्षिप्य, स्रुवेण पिधाय, मस्तकावधि उद्धृत्य **"ओं नमो नारायणाय स्वाहा"** इति मूलमन्त्रमुच्चरन् पूर्णाहुतिं जुहुयात्। गळन्तिकाकूर्चेन तूष्णीं परिषेचयेत् । ततः -

ओं षौं नमः पराय परमेष्ठ्यात्मने स्वाहा
ओं यां नमः पराय पुरुषात्मने स्वाहा
ओं रां नमः पराय विश्वात्मने स्वाहा
ओं वां नमः पराय निवृत्त्यात्मने स्वाहा
ओं लां नमः पराय सर्वात्मने स्वाहा

इति पञ्चोपनिषन्मंत्रैः आज्येन प्रायश्चित्ताहुतीर्हुत्वा, घृतेन स्रुचमापूर्य, स्रुवेण पिधाय, नासाग्रपर्यन्तमुद्धृत्य, **"ओं नमो नारायणाय स्वाहा"** इति जुहुयात् ।।

कुण्डस्थं भगवन्तं नारायणं पुनः आवाहनपात्रमागतं विचिन्त्य, प्रणीतायां स्थितं भगवन्तं स्वहृदयकमले उद्वास्य, ब्रह्माणं यथास्थान-मुद्वास्य, आत्मनः पुरतः स्रुचं, तस्य दक्षिणे आज्यपात्रं, वामे स्रुवं निधाय, उपयुक्तकुशान् सर्वानादाय, आज्यपात्रे मूलान्, स्रुवे मध्यान्, स्रुचि अग्रान्, एवं त्रिवारं स्पृष्ट्वा, दर्भानग्नौ नियोजयेत् । स्रुचं जलेन पूरयित्वा, कुण्डाद्बहिः प्रादक्षिण्येन परिषिच्य, शेषजलेनात्मानं प्रोक्ष्य, ★ कुंडभस्मना शिरसि तिलकं धृत्वा, आवाहनपात्रमादाय,

★ स्रुक्स्रुवों से (होम) भस्म को निकालना वर्जित है । उन को अग्निस्पर्श नहीं कराना चाहिए । उस (भस्म) को निकालने के लिए अलग एक काष्ठखण्ड को प्रयोग करना चाहिए ।।

पूर्ववत् तूर्यघोषे प्रवर्तिते गर्भगेहं समासाद्य, पात्रस्थदेवं कर्मार्चायां, तस्मात् धृवबेरे समुद्वास्य, पुष्पाञ्जलिं च दत्वा ।

भक्त्या यदग्नौ विहितं यथाशक्ति यथाविधि ।
आराधनं गृहाण त्वं कृपया भक्तवत्सल! ।।

इति विज्ञाप्य, होमफलं भगवते समर्पयेत् ।।

✪✪✪✪✪

बलिदानक्रमः

अथाचार्यः भगवन्तमासाद्य -

स्वामिन्! तव पदांभोजकैंकर्यादिषु लालसाः ।
चण्डप्रचण्डप्रमुखाः पार्षदाः द्वारवासिनः ।।
त्वत्सेवार्थं स्थितास्सर्वे महापीठावसानकम् ।
सेवादानाय तेषां त्वं शिबिकारोहणं कुरु ।।

इति प्रार्थ्य, मूलबेरात् कर्मार्चायाम्, तस्मात् बलिबेरे च संकर्षण शक्तिमावाह्य★ आवाहितं भगवंतं अर्घ्यादिभिरष्टोपचारैरभ्यर्च्य, पृथुकादि निवेद्य, नीराजनं दत्वा, शिबिकामारोपयेत् । बलिप्रसादपात्रं हस्ते निधाय, तूर्यवेदादिघोषे प्रवर्तिते बलिबिम्बेन सह प्रस्थाय, गर्भगृहद्वारपालानां पुरतः बलिपीठं प्रोक्ष्य, गंधपुष्पधूपदीपान्तं समर्प्य।

★ प्रत्येकं बलिबेरस्याभावे प्रातश्चेत् बलिप्रदानार्थं तण्डुले, मध्याह्ने अन्ने, सायं कुसुमेषु च, द्वादशदळपद्मं विलिख्य, मध्ये कर्णिकायां संकर्षणशक्तिमावाह्य दळेषु च श्रीवत्स-वनमाला-योगमायादिद्वादशशक्तीः आवाह्य, अर्घ्यादि नीराजनान्तं समभ्यर्च्य, दीक्षितं परिचारकं गरुडं मत्वा, तस्य मूर्ध्नि निधाय, ततो बलिप्रदान माचरेत् । अयमेव बलिप्रदानोत्सवः, नित्योत्सवोपि भवति; तस्मात् पुनरन्तः प्रवेशनसमये गर्भगृहद्वारे, भगवते अर्घ्यपाद्याचमनीयं गंध-पुष्प-धूप-दीप-पृथुकादि निवेद्य, नीराजनान्तं कृत्वा, अंतः प्रवेश्य, भगवच्छक्तिं यथाक्रमं मूले नियोजयेत्, परिचारकस्य अभावे हृदयकमले एव भगवच्छक्तिं निवेश्य, बलिं दद्यात्, पुनर्मूले च नियोजयेत् ।।

ओं च्रों चण्डाय द्वारपालाय स्वाहा - सोदकं बलिं ददामि ।

ओं पृं प्रचण्डाय द्वारपालाय स्वाहा - सोदकं बलिं ददामि ।

मध्ये गरुडाय स्वाहा - सोदकं बलिं ददामि । इति द्वारमध्ये बलिं दत्वा ।।

आलयस्य प्रागाद्यष्टदिक्षु इन्द्रादीशानपर्यन्तं एकैकशः गंध-पुष्पादि चतुरुपचारैरभ्यर्च्य, ततो बलिं दद्यात् ।

प्राग्भागे - **ओम् इन्द्राय सुराधिपतये सवाहनपरिवारयुताय स्वाहा सोदकं बलिं ददामि ।**

आग्नेये - **ओम् अग्नये तेजोधिपतये सवाहनपरिवारयुताय स्वाहा सोदकं बलिं ददामि ।**

दक्षिणे - **ओम् यमाय पितृपतये सवाहनपरिवारयुताय स्वाहा सोदकं बलिं ददामि ।**

नैऋत्यां - **ओम् निर्ऋतये रक्षोधिपतये सवाहनपरिवारयुताय स्वाहा सोदकं बलिं ददामि ।**

पश्चिमे - **ओम् वरुणाय जलाधिपतये सवाहनपरिवारयुताय स्वाहा सोदकं बलिं ददामि ।**

वायव्ये - **ओम् वायवे प्राणाधिपतये सवाहनपरिवारयुताय स्वाहा सोदकं बलिं ददामि ।**

उत्तरे - **ओम् कुबेराय धनाधिपतये सवाहनपरिवारयुताय स्वाहा सोदकं बलिं ददामि ।**

ऐशान्ये - **ओम् ईशानाय पशुपतये सवाहनपरिवारयुताय स्वाहा सोदकं बलिं ददामि ।।**

इति च दत्वा, ततो महाबलिपीठं समासाद्य, महाबलिपीठस्य प्रागादि चतुर्दिक्षु

प्राच्यां - ओम् विघ्नेशाय स्वाहा - सोदकं बलिं ददामि

दक्षिणे - ओम् ईशानाय स्वाहा - सोदकं बलिं ददामि

पश्चिमे - ओम् गरुडाय स्वाहा - सोदकं बलिं ददामि

उत्तरे - ओम् दुर्गायै स्वाहा - सोदकं बलिं ददामि

ततो महाबलिपीठस्य अष्टदळेषु कुमुदादि सुप्रतिष्ठितपर्यन्तं सोदकं बलिं दद्यात् ।।

प्राग्भागे - ओं कुमुदाय गणाधिपतये सवाहनपरिवारयुताय स्वाहा सोदकं बलिं ददामि

आग्नेये - ओं कुमुदाक्षाय गणाधिपतये सवाहनपरिवारयुताय स्वाहा सोदकं बलिं ददामि

दक्षिणे - ओं पुण्डरीकाक्षाय गणाधिपतये सवाहनपरिवारयुताय स्वाहा सोदकं बलिं ददामि

नैऋत्यां - ओं वामनाय गणाधिपतये सवाहनपरिवारयुताय स्वाहा सोदकं बलिं ददामि

पश्चिमे - ओं शंखुकर्णाय गणाधिपतये सवाहनपरिवारयुताय स्वाहा सोदकं बलिं ददामि ।

वायव्ये - ओं सर्पनेत्राय गणाधिपतये सवाहनपरिवारयुताय स्वाहा सोदकं बलिं ददामि ।

उत्तरे - ओं सुमुखाय गणाधिपतये सवाहनपरिवारयुताय स्वाहा सोदकं बलिं ददामि ।

ऐशान्ये - ओं सुप्रतिष्ठिताय गणाधिपतये सवाहनपरियुताय स्वाहा सोदकं बलिं ददामि । इति च दत्वा ।

महाबलिपीठकर्णिकायाम् -

'ओं भगवद्विष्णुपार्षदेभ्यो महाभूतेभ्यो नमः' इति गंधादीन्

चतुरुपचारान् समर्प्य, सोदकं निरवशेषं बलिं गृह्णन्तु स्वाहा । इति शिष्टं बलिप्रसादं बलिपीठस्योपरि निक्षिपेत् । शिबिकया साकं प्रादक्षिण्येन क्रमेण गर्भगेहं परिक्रम्य, भगवन्तमन्तः प्रावेश्य, बिंबगतां शक्तिं पुनर्मूले नियोजयेत् ।।

✪✪✪✪✪

५. यात्रासनम्

नित्योत्सवविधि :- ए. नित्योत्सवाभावे★)

(प्रत्येकं नित्योत्सवबेराभावे परिक्रमणमेव नित्योत्सवो भवति। नित्योत्सवार्थं बलिप्रदानानन्तरं बलिबेरेण पुनर्धाम प्रदक्षिणीकृत्य, द्वारे-अर्घ्य, पाद्याचमन, सुगंधपुष्प, धूप, दीपान्तमर्चयित्वा, पृथुकादि निवेद्य, घटदीपादि नीराजनान्तं समभ्यर्च्य, ततः अन्तः प्रवेश्य, भगवच्छक्तिं मूले नियोजयेत्) ।।

बि) नित्योत्सवस्थितौ ★★

ततः नित्योत्सवार्थमाचार्यः भगवन्तं समासाद्य -

श्लो।।यात्रासनमिदं तुभ्यं मया दत्तं गृहाण भो! ।
त्वत्सेवार्थं ब्रह्मरुद्रमुखावाद्याः दिवौकसः ।।
प्रतीक्षन्ते द्वारदेशे बद्धाञ्जलिपुटाः हरे! ।
तस्मात्त्वं भक्तवात्सल्यजलधे! यानमाश्रय ।।

इति भगवन्तं प्रार्थ्य, मूलात्संकर्षणशक्तिं यथाक्रममावाह्य, यात्राबेरे निवेश्य, शिबिकामारोप्य, अर्घ्यपाद्याद्यष्टोपचारान्, तांबूलं च समर्प्य, छत्रचामरादिराजोपचारैः प्रस्थाप्य, धाम प्रदक्षिणीकृत्य, बलिपीठपुरोभागे पुनः अर्घ्यपाद्याद्यष्टोपचारान्, पृथुकादिनिवेदनम्,

---

★ *नित्योत्सवमूर्ति के रहने पर इस प्रकार करना चाहिए ।*

★★ *नित्योत्सवमूर्ति हो तो इस प्रकार करें ।*

घटदीपादि समर्प्य, नीराजनान्तं समर्प्य, प्रादक्षिण्येनैव गर्भगेहं प्रवेश्य, बिंबागतशक्तिं यधाविधि मूले नियोजयेत् ।।

मङ्गळाशासनम्

ततश्च यवनिकामपसार्य, भोज्यासनाङ्ग नीराजनं (मंगळाशासनं) मंत्रपुष्पसमर्पणं च कुर्यात् । वेदवेदाङ्गदिव्यप्रबन्धादिशान्तिपाठ श्रावणं (शात्तुमुरै) अत्र संप्रदायसिद्धम् ।।

तीर्थादिविनियोगक्रमः

ततः आळ्वाराचार्यादिभ्यः, विष्णुचरणामृतं, शठारिं च दत्वा, पूजकस्स्वयं स्वीकृत्य, वैष्णवयतिभ्यः, श्रीवैष्णवेभ्यः, वेदविद्भ्यः, क्षत्रिय वैश्य भागवतादिभ्यः क्रमशः तीर्थ, शठारिप्रसादादि कं दद्यात् ।। (विनियोगं कुर्यात्★)

मध्याह्नाराधना

अथाचार्यः मध्याह्ने-नित्यकर्म परिसमाप्य, भगवन्तं समासाद्य, तत्कालानीतगाळितसंस्कृतजलेन अर्घ्यादिपात्राणि पुनः यथाविधि स्थापयित्वा, ध्रुवे ततश्च कर्मार्चायां यथाक्रममर्घ्यादिदीपान्तं अष्टोपचारान् समर्प्य (दिव्यप्रबन्धे-नालायिरतनियन्, रामानुजनूत्तन्दादि, उपदेशरत्नमालै च अनुसन्धानं कुर्यात् । इदं संप्रदायसिद्धम्), चतुर्विधान्नफलादिनिवेदनञ्च कृत्वा, ताम्बूल, होम, बलिप्रदान, मङ्गळाशासनान्तं यधाविधि कुर्यात् ।

सायमाराधना

सायञ्च, नित्यकर्म परिसमाप्य, तत्कालानीतगाळितसंस्कृतजलेन अर्घ्यादिपात्राणि पुनः यधाविधि स्थापयित्वा, भगवन् धाविधि

★ *यजमान अथवा दर्शनार्थी लोगों को यदि अष्टोत्तरशत-सहस्रनामादि पूजा कराना हो तो तीर्थ, प्रसादादि विनियोग पूरा होने के बाद ही कराना चाहिए । बीच में नहीं । नित्याराधना पूरा होने के बाद ही विशेष उत्सवादि कार्यक्रम आरंभ करना चाहिए ।।*

अर्घ्यपाद्याद्यष्टोपचारैरभ्यर्च्य* (ततः दिव्यप्रबन्धे- तिरुप्पल्लाण्डु, कण्णिनुण्शिरुत्ताम्बु, आ*ि*ये*, तत्तन्मंदिरभगवद्विषयकगाथाश्च विज्ञापनीयाः। इत्येतत् संप्रदायसिद्धम्) ततः राजोपचारवत् भक्ष्यादि निवेदनं कृत्वा, ताम्बूलञ्च समर्प्य, नित्यहोम, बलिप्रदान, नित्योत्सव नीराजन, तीर्थप्रसाददादिवितरणञ्च यथाक्रममाचरेत् ।।

६. शय्यासनम्

ततो मूलबेराद्यथाक्रमं शयनकौतुके (अभावे-कुर्चे सकलं कुर्यात्) श्री-भूमिसहितां अनिरुद्धशक्तिमावाह्य, ध्रुव, कर्म, शयनबेरान् अर्घ्य पाद्याचमनादिभिःयजेत् ।।

ततो घृतयुक्तगुडान्न, गोक्षीर-फलानि, भक्ष्यजातानि निवेद्य शय्यायामनन्तं ध्यात्वा, तं गंध-पुष्प-धूप-दीपैश्चतुरुपचारैरभ्यर्च्य, शयनबेरसमीपं गत्वा -

भगवन्! योगनिद्रायाः कालोऽयं समुपागतः ।
शयनं भोगिपर्यङ्कमलङ्कुरु जगत्पते! ।।

इति सम्प्रार्थ्य, श्रीभूमिसहितं शयनबेरं शय्यायां शाययेत्। ततः शर्करायुतं गोक्षीरं, नवनीतं ताम्बूलं च निवेदयेत्, ततश्च विलपन्, अपराधक्षमां प्रार्थयेत् ।।

श्लो।। **मंत्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं जनार्दन! ।**
यत्कृतं तु मया देव! परिपूर्णं तदस्तु ते ।।
उपचारापदेशेन कृतानहरहर्मया ।
अपचारानिमान् सर्वान् क्षमस्व पुरुषोत्तम! ।।

** पारायण एवं दिव्यप्रबन्धादि अनुसन्धान के समय में भक्तों को तीर्थ-शठारि आदि देना वर्जित है । पूजा आदि कराना आवश्यक हो तो पारायणादि प्रारम्भ होने से पहले ही कर सकते हैं ।।*

स्वस्ति प्रजाभ्यः परिपालयन्तां
न्याय्येन मार्गेण महीं महीशाः ।
गोब्राह्मणेभ्यः शुभमस्तु नित्यं
लोकास्समस्ताःसुखिनो भवन्तु ।।

कायेन वाचा मनसेन्द्रियैर्वा
बुद्ध्यात्मना वा प्रकृतेस्स्वभावात् ।
करोमि यद्यत् सकलं परस्मै
नारायणायेति समर्पयामि ।।

इति पुष्पाञ्जलिं दत्वा, बहिरागत्य, **'ओं कवचाय हुम्'** इति कवचमन्त्रेण कवाटं बध्वा, द्वारदेशे- **'ओं नमो महासुदर्शनाय स्वाहा'** इति सुदर्शनं संबोध्य ।

'ओं चण्डाय नमः', **'ओं प्रचण्डाय नमः'** इति द्वारपालकौ संबोध्य, चक्रमुद्रां प्रदर्श्य, प्रादक्षिण्येन स्वगृहं गच्छेत् ।

***

अथ विष्वक्सेनाराधना✪

अथाचार्यः पवित्रपाणिः, गोमयालेपिते देशे यागसंभारादिसहितः प्राङ्मुखः उपविश्य, प्राणानायम्य, अत्र प्रणवेन रेचकं षोडशमात्राभिः, पूरकं द्वात्रिंशन्मात्राभिः, कुंभकं चतुष्षष्टिमात्राभिः, पुनः रेचकं षोडशमात्राभिः कुर्यात् । यथाविधि विष्वक्सेनाराधनमारभेत । पुण्याहकलशस्य दक्षिणे पार्श्वे दर्भकूर्चं निधाय ।

"ओं करिष्यमाणस्य कर्मणः निर्विघ्नेन परिसमाप्त्यर्थमादौ विष्वक्सेनाराधनं करिष्ये" इति सङ्कल्प्य ।

✪ श्रीप्रश्नसंहितायाः

ओं भूः विष्वक्सेनमावाहयामि ।

ओं भुवः विष्वक्सेनमावाहयामि ।

ओं सुवः विष्वक्सेनमावाहयामि ।

ओं भूर्भुवस्सुवः विष्वक्सेनमावाहयामि ।

इत्यावाह्य, मनसा ध्यात्वा ।

ओं विष्वक्सेनाय नमः आसनं समर्पयामि

ओं विष्वक्सेनाय नमः अर्घ्यं समर्पयामि

ओं विष्वक्सेनाय नमः पाद्यं समर्पयामि

ओं विष्वक्सेनाय नमः आचमनीयं समर्पयामि

ओं विष्वक्सेनाय नमः स्नानं समर्पयामि

ओं विष्वक्सेनाय नमः स्नानाङ्गमाचमनीयं समर्पयामि

ओं विष्वक्सेनाय नमः वस्त्रं समर्पयामि

ओं विष्वक्सेनाय नमः उत्तरीयं समर्पयामि

ओं विष्वक्सेनाय नमः ऊर्ध्वपुण्ड्रान् समर्पयामि

ओं विष्वक्सेनाय नमः यज्ञोपवीतं समर्पयामि ।

ओं विष्वक्सेनाय नमः गंधं समर्पयामि ।

ओं विष्वक्सेनाय नमः सर्वाभरणालंकारान् समर्पयामि ।

ओं विष्वक्सेनाय नमः पुष्पं समर्पयामि ।

*****

ओं विष्वक्सेनाय नमः

ओं श्रीमते नमः

ओं सूत्रवतीनाथाय नमः

ओं गजाश्वमुखसेविताय नमः

ओं प्रसन्नवदनाय नमः

ओं शान्ताय नमः

ओं प्रभाकरसमप्रभाय नमः
ओं वेत्रपाणये नमः
ओं हृषीकेशाय नमः
ओं विश्वरक्षापरायणाय नमः
ओं भक्तांतरायविध्वंसिने नमः
ओं आर्यामात्याय नमः
ओं कृपानिधये नमः
ओं श्रीमते विष्वक्सेनाय नमः
इति तन्नामभिः द्वादशभिरर्चयेत्
ओं विष्वक्सेनाय नमः धूपं समर्पयामि
ओं विष्वक्सेनाय नमः दीपं समर्पयामि

"एते गंधाक्षत-पुष्प-धूप-दीपोत्तरीयाभरणाद्यलंकारा स्सर्वोपचाराः"।- श्रीमते विष्वक्सेनाय नमः गुडखण्डं* निवेदयामि, समस्तोपचारान् समर्पयामि, श्रीमते विष्वक्सेनाय नमः यथास्थान- मुद्वासयामि; इत्युद्वासयेत् ।।

❋❋❋

एकायनपुण्याहवाचनम्

श्रीविष्वक्सेनाराधनानन्तरमाचार्यः, श्रीगोविन्द गोविन्द गोविन्द, श्रीमहाविष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्स्य अद्य ब्रह्मणः द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवराहकल्पे, वैवस्वतमन्वन्तरे, कलियुगे प्रथमपादे, जम्बूद्वीपे, भारतवर्षे, भरतखण्डे, शकाब्दे मेरोर्दक्षिणदिग्भागे .... देशे .... भगवद्भागवताचार्यसन्निधौ, अस्मिन्, प्रवर्तमानस्य व्यावहारिकचांद्रमानेन प्रभवादि षष्टिसंवत्सराणां मध्ये ..... संवत्सरे

* *जिस वस्तु का निवेदन किया जाता है उसी का नाम उच्चारण करें । गुड ही निवेदन करें यह नियम नहीं है ।।*

.... अयने ..... ऋतौ ..... मासे ..... पक्षे ...... वासरे ..... नक्षत्रे शुभयोग शुभकरण एवंगुणविशेषण विशिष्टायामस्यां .... शुभतिथौ, भगवद्भागवताचार्यकैंकर्यरूपेण अस्य देवदेवस्य ..... ★करिष्ये, मच्छरीरशुद्ध्यर्थञ्च तत्तद्द्रव्यशुद्ध्यर्थञ्च वासुदेव पुण्याहवाचनं करिष्ये ।।

ओं प्रणवस्य परब्रह्म ऋषिः, परमात्मा देवता, देवी गायत्री छन्दः प्राणायामे विनियोगः। एवं त्रिः प्राणानायम्य, भूतशुद्धिं चरेत्।।

ओं चरणं पवित्रं विततं पुराणं येन पूतस्तरति दुष्कृतानि तेन पवित्रेण शुद्धेन पूताऽति पाप्मानमरातिं तरेम ।।

इति महीं प्रक्षाल्य ।

ओं विष्णोरराटमसि विष्णोः पृष्ठमसि विष्णोश्नप्त्रेस्थो विष्णोस्स्यूरसि विष्णोर्ध्रुवमसि वैष्णवमसि विष्णवेत्वा ।।

इति दर्भैः समृज्य ।

ओं गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् । ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ।।

इति गोमयेनानुलिप्य ।

ओं आप उन्दन्तु जीवसे दीर्घायुत्वाय वर्चसे । यस्त्वा हृदा कीरिणामन्यमानो मर्त्यं मर्त्यो जोहवीमि ।।

इति पंचचूर्णैरलंकृत्य ।

★ *नित्यस्नपन अथवा जिस कर्म को निर्देश कर के यह पुण्याहवाचन किया जा रहा है, उसे (कर्म को) अनुसन्धान करें ।।*

ओं देवस्यत्वा सवितुः प्रसवेश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णोहस्ताभ्यां प्रतिगृह्णामि ।।

इति भूमौ अक्षतान्विकीर्य ।

ओं ग्रीष्मो हेमन्त उतनो वसन्तश्शरद्वर्षास्सुवितन्नो अस्तु । तेषामृतूनाँ शतशारदानान्निवात एषामभयेस्याम

इति धान्यपीठम्प्रकल्प्य ।

ओं शन्नोदेवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये शंयोरभि स्रवन्तु नः ।

इति शतपत्रपद्मं विलिख्य ।

ओं धन्वनागा धन्वनाजिंजयेम धन्वनातीव्रा स्समदोजयेम। धनुश्शत्रोरपकामं कृणोति धन्वनासर्वाः प्रदिशो जयेम ।।

इति दर्भानुपरि परिस्तीर्य ।

तस्मिन्सलक्षणं, नारिकेळफलशिरस्कं, सप्तदर्भकृत-कूर्चाम्राश्वत्थपल्लवयुतं, गन्धतोयेन पूरितं, सूत्रवेष्टितं, सुवर्णादिकरकं संस्थाप्य, गन्धपुष्पादिभिरलंकृत्य, तस्य परितः एकायनविदो ऋत्विजः विन्यस्य, तेषां हस्तेषु दर्भान् दद्यात् ।।

ततः आदित्यमण्डलमध्यस्थहरे दक्षिणहस्तात् **'ओं नमो भगवते सुदर्शनाय सहस्त्रार हुं फट्'** इति करके सुदर्शनमावाह्य, गंध-पुष्प-धूप-दीपैश्चतुर्भिरभ्यर्च्य, फलादि निवेदयेत् । तदनु ऋत्विग्भिस्सह करकं दर्भैस्संस्पृशन् गुरुः पुण्याहं वाचयेत् ।।

पवित्रमन्त्रम्

"ओं भगवान् पवित्रम्, ओं वासुदेवः पवित्रम् ।
ओं तत्पादौ पवित्रम्, ओं तत्पादोदकं पवित्रम् ।" इति

ततः **आत्मानुवादम्**

"ओं एकपदी द्विपदी त्रिपदी चतुष्पद्यस्य
विपदशी नहिपद्यसे नमस्ते तुरीयाय दर्शिताय पदाय
परोरजसे असावदोमा प्रपतत् एष सा परा प्रकृतिः
एष तत्परं ब्रह्म एष तत्परमात्मा ।"

आत्मव्यूहम्

"ओं चतुर्विधस्सर्वज्ञस्सर्वेश्वरस्सर्वदर्शी समृद्धिर्वशी स्वात्मा समाराधयन् अन्यूनादिरनन्तः पीतदुरिभयक्रोधः निर्दोषः निरवधिष्ठो भगवान् दीर्घायुरस्तु ।"

दीर्घायुषं भगवान् वासुदेवः करोति । शिवं पानीयमस्तु । शिवं पानीयं भगवान् वासुदेवः करोति। अक्षतैरक्षतंचास्तु, अक्षतमरोगं कुशलं भगवान् वासुदेवः करोति । सुमनसः सौमनसमस्तु । सौमनसं भगवान् वासुदेवः करोति ।।

ओं भगवान् वासुदेवो वर्धताम्, ओं भगवान् संकर्षणो वर्धताम्।
ओं भगवान् प्रद्युम्नो वर्धताम्, ओं भगवान् अनिरुद्धो वर्धताम्।
ओं भगवान् पुरुषो वर्धताम्, ओं भगवान् सत्यो वर्धताम् ।
ओं भगवान् अच्युतो वर्धताम्, ओं भगवान् अनन्तो वर्धताम् ।
ओं भगवान् वासुदेवः प्रीयताम्, ओं भगवान् संकर्षणः प्रीयताम्।
ओं भगवान् प्रद्युम्नः प्रीयताम्, ओं भगवान् अनिरुद्धः प्रीयताम्।
ओं भगवान् पुरुषः प्रीयताम्, ओं भगवान् सत्यः प्रीयताम् ।

ओं भगवान् अच्युतः प्रीयताम्, ओं भगवान् अनन्तः प्रीयताम्।
ओं भगवान् वासुदेवः शान्तिरस्तु, ओं भगवान् संकर्षणः शान्तिरस्तु।
ओं भगवान् प्रद्युम्नः शान्तिरस्तु, ओं भगवान् सत्यः शान्तिरस्तु।
ओं भगवान् अच्युतः शान्तिरस्तु, ओं भगवान् अनन्तः शान्तिरस्तु

इत्युक्त्वा, शुद्धिमन्त्रान् वाचयेत् -

श्लो।।शुद्धयेस्तु परो देवो वासुदेवोस्तु शुद्धये ।
संकर्षणश्शुद्धयेस्तु प्रद्युम्नश्चास्तु शुद्धये ।। १

अनिरुद्धः केशवश्च श्रीमन्नारायणस्तथा ।
माधवश्शुद्धयेचास्तु गोविंदश्शुद्धये तथा ।। २

शुद्धये विष्णुरस्त्वाद्यः शुद्धये मधुसूदनः ।
त्रिविक्रमो वामनश्च श्रीधरश्चास्तु शुद्धये ।। ३

हृषीकेशः पद्मनाभः शुद्धयेस्तु जगत्पतिः ।
दामोदरश्शुद्धयेस्तु पद्मनाभोस्तु शुद्धये ।। ४

ध्रुवोनंतस्तु शक्त्यात्मा शुद्धये मधुसूधनः ।
विद्याधिदेवः कपिलो विश्वरूपोस्तु शुद्धये ।। ५

विहंगमस्तु क्रोडात्मा शुद्धये बडबाननः ।
धर्मो वागीश्वरो देव एकार्णवशयस्तथा ।। ६

शुद्धयेस्तु सदा देवः कूर्मः पातालधारकः ।
वराहश्शुद्धये चास्तु नारसिंहोस्तु शुद्धये ।। ७

अमृताहरणश्चापि श्रीपतिश्चास्तु शुद्धये ।
कांतात्मा राहुजिच्चास्तु कालनेमिस्तु शुद्धये ।। ८

पारिजातहरश्चास्तु लोकनाथस्तु शुद्धये ।
दत्तात्रेयस्तु भगवान् न्यग्रोधशयनस्तथा ।। ९

एकशृंगतनुश्चास्तु वामनश्चास्तु शुद्धये ।
त्रिविक्रमो नरश्चैव नारायणहरिस्तथा ।। १०

ज्वलत्परशुभृद्रामः वेदविच्चास्तु शुद्धये ।
रामो धनुर्धरश्चास्तु कृष्णश्चास्तु विशुद्धये ।। ११

शुद्धयेस्तु सदा कल्की सर्वदोषक्षयंकरः ।
शुद्धयेस्तु सदा देवः पातालशयनः प्रभुः ।। १२

शुद्धये संतु सर्वेषां सर्वे सर्वत्र सर्वदा ।
ऋद्धये पुष्टये संतु शांतये सिद्धये सदा ।। १३

शिवाय मुक्तिवृद्धिभ्यामविघ्नाय च कर्मणाम् ।
मंत्राणां देशिकेंद्राणां दासीदासगवामपि ।। १४

वेदशास्त्रागमादीनां व्रतानामिष्टसंपदाम् ।
आयुष्यारोग्यमेधानां धनधान्यादिसंपदाम् ।। १५

राज्ञो जनपदस्यापि यजमानस्य मंत्रिणाम् ।
पंचकालविशुद्धानां वैष्णवानां तपस्विनाम् ।। १६

स्वस्त्यस्तु च शिवंचास्तु शिवंचास्तु पुनः पुनः ।
अविघ्नमनिशंचास्तु दीर्घमायुष्यमस्तु नः ।। १७

समाहितमनश्चास्तु पुण्याहं सर्वशुद्धिकृत् ।
शंखचक्रगदापद्मयुक्तः सर्वेश्वरेश्वरः ।। १८

प्रीयतां वासुदेवोयं श्रीपतिः सर्वसिद्धिदः ।
प्रीयतां प्रीयतामद्य पूर्वोक्तास्सर्वदेवताः ।। १९

इत्थमेकायनप्रोक्तं पुण्याहं दीक्षितोत्तमैः ।
वाचयित्वा तदद्भिस्स्वमात्मानं प्रोक्षयेत्पुरा ★ ।। २०

इति वाचयित्वा

"ओं सहस्त्रार हुं फट्" इति एतन्मंत्र जलैरेव कूर्चपल्लवैरात्मानं, ऋत्विजः, परिचारकान् (स्नपन) यागसंभारादीन् प्रोक्षयेत् ।।

❋ ❋ ❋

★ *अत्र-वेदविद्भिः शान्तिमंत्र, पवमानादीनि वाचयेत्, स्वयमेव वा पठेत् ।।*

अनुबंध १ (न्यासों का सङ्ग्रह)

१. ब्रह्मचारिणाम् अष्टाक्षरविद्यया सृष्टिन्यासः

अस्य श्रीमदष्टाक्षरमहामन्त्रस्य (इत्यारभ्य पूर्ववत्) - करपृष्ठौ शोधयित्वा -

करन्यासः

(इसी ग्रन्थ के ७ वें पेज में बताये गये अनुसार करना चाहिए)

✪ओं ओं ओं शुक्लवर्णं दक्षिणांगुष्ठेन दक्षिणतर्जनीपर्वे
ओं नं ओं स्वर्ण वर्णं दक्षिणांगुष्ठेन दक्षिणमध्यमपर्वे
ओं मों ओं कृष्ण वर्णं दक्षिणांगुष्ठेन दक्षिणानामिकापर्वे
ओं नां ओं रक्तवर्णं दक्षिणांगुष्ठेन दक्षिणकनिष्ठिकापर्वे
ओं रां ओं सर्ववर्णं वामांगुष्ठेन वामकनिष्ठिकापर्वे
ओं यं ओं पीत (किंजल्क) वर्णं वामांगुष्ठेन वामानामिकापर्वे
ओं णां ओं पद्मवर्णं वामांगुष्ठेन वाममध्यमपर्वे
ओं यं ओं कुंकुमवर्णं वामांगुष्ठेन वामतर्जनीपर्वे च न्यसेत्

करतलषडंगन्यासः

ओं कुमुदवर्णाय क्रुद्धोल्काय अंगुष्ठाभ्यां नमः
ओं बंधूकवर्णाय महोल्काय तर्जनीभ्यां स्वाहा
ओं असितोत्सलवर्णाय वीरोल्काय मध्यमाभ्यां वषट्
ओं अब्जकेसरवर्णाय द्युल्काय अनामिकाभ्यां हुम्
ओं अंभोजवर्णाय सहस्रोल्काय कनिष्ठिकाभ्यां फट्
ओं अतसीकुसुमवर्णाय तेजोल्काय नखमुखेभ्यो वौषट्"

इति न्यस्य, व्यापकन्यासं कुर्यात्

✪ *अंगुळियों के ऊपर पर्वभागों में और नीचे के पर्वभागों में प्रणव को और मध्यमपर्व में बीजाक्षरों को प्रत्येक स्थान में न्यास करना चाहिए ।।*

व्यापकन्यासः

"ततो दक्षिणहस्ते (इत्यारभ्य) ....
.... मूर्धादि पादान्तं देहे न्यसेत्", इति

ततो देहे सृष्टिन्यासः

ओं ओं ओम् इति मूर्ध्नि मध्यमांगुल्या
ओं नं ओम् इति नेत्रयोः तर्जनीमध्यमाभ्याम्
ओं मों ओम् इति अंगुष्ठानामिकाभ्यां मुखे
ओं नां ओम् इति अंगुष्ठतर्जनीभ्यां हृदये
ओं रां ओम् इति अंगुष्ठकनिष्ठिकाभ्यां नाभौ
ओं यं ओम् इति विनांगुष्ठसर्वांगुळीभिः गुह्ये
ओं णां ओम् इति विनांगुष्ठसर्वांगुळीभिः जान्वोः
ओं यं ओम् इति सर्वांगुळीभिः पादयोः न्यसेत्

देहे अंगन्यासः

ओं ओं ओं क्रुद्धोल्काय हृदयाय नमः
ओं नं ओं महोल्काय शिरसे स्वाहा
ओं मों ओं वीरोल्काय शिखायै वषट्
ओं नां ओं द्युल्काय कवचाय हुम्
ओं रां ओं तेजोल्काय नेत्राभ्यां वौषट्
ओं यं ओं सहस्रोल्काय अस्त्राय फट्
ओं णां ओं क्रुद्धोल्काय हृदयाय नमः
ओं यं ओं महोल्काय शिरसे स्वाहा

इति च तत्तन्मुद्राः प्रदर्शयन् कुर्यात्

किरीट कुंडल .... मुद्राः प्रदर्श्य, अष्टाक्षरमूर्ति ध्यानमाचरेत् ।।

"चतुर्भुजमुदारांगं (इत्यारभ्य) मंत्रजापपरो भवेत्" इति

२. गृहस्थानां स्थितिन्यासः★

(९ वें पेज में दर्शाये गये अनुसार अनुसन्धान करें)

३. अथ यतीनाम् अष्टाक्षरीविद्यया संहारन्यासः

"अस्य श्रीमदष्टाक्षरमहामन्त्रस्य (इत्यारभ्य)

.... इति करतलकरपृष्ठौ शोधयित्वा"

करन्यासः

ओं यं ओं सर्ववर्णं वामांगुष्ठेन वामतर्जनीपर्वे
ओं णां ओं किंजल्क (पीत) **वर्णं वामांगुष्ठेन वाममध्यमांगुळीपर्वे**
ओं यं ओं पद्मवर्णं वामांगुष्ठेन वामानामिकापर्वे
ओं रां ओं कुंकुमवर्णं वामांगुष्ठेन वामकनिष्ठिकापर्वे
ओं नां ओं रक्तवर्णं दक्षिणांगुष्ठेन दक्षिणकनिष्ठिकापर्वे
ओं मों ओं कृष्णवर्णं दक्षिणांगुष्ठेन दक्षिणानामिकापर्वे
ओं नं ओं सर्ववर्णं दक्षिणांगुष्ठेन दक्षिणमध्यमपर्वे
ओं ओं ओं शुक्लवर्णं दक्षिणांगुष्ठेन दक्षिणतर्जनीपर्वे च ।

न्यस्य, करतलषडंगन्यासं कुर्यात् -

करतल षडंगन्यासः

पूर्ववत् कुर्यात् ।

"कुमुदवर्णाय (इत्यारभ्य) .... वौषट् इतिन्यासं कृत्वा"।

व्यापकन्यासं कुर्यात्

★ *अष्टाक्षरीस्थितिन्यास, मानसयाग से पहले इसी ग्रन्थ में दिया गया है ।।*

व्यापकन्यासः

"ततो दक्षिणहस्ते (इत्यारभ्य) .... मूर्धादि पादान्तं देहे न्यसेत्" इति

देहे संहारन्यासः

ओं यं ओम्   इति पादयोः सर्वांगुळीभिः
ओं णां ओम् इति जान्वोः विनांगुष्ठसर्वांगुळीभिः
ओं यं ओम्   इति गुह्ये विनांगुष्ठसर्वांगुळीभिः
ओं रां ओम्   इति नाभौ अंगुष्ठ-कनिष्ठिकाभ्याम्
ओं नां ओम् इति हृदये अंगुष्ठ-तर्जनीभ्याम्
ओं मों ओम् इति मुखे अंगुष्ठ-अनामिकाभ्याम्
ओं नं ओम्   इति नेत्रयोः तर्जनीमध्यमाभ्याम्
ओं ओं ओम् इति मूर्ध्नि मध्यमांगुल्या

च न्यस्य, अंगन्यासं कुर्यात् ।

"ओं ओं ओं क्रुद्धोल्काय हृदयाय ....
.... इति तत्तन्मुद्राः प्रदर्श्य"

अष्टाक्षरमूर्तिध्यानमाचरेत् ।

"चतुर्भुजमुदारांगं (इत्यारभ्य) मंत्रजापपरो भवेत्"

एवं ध्यायेत् ।

४. ब्रह्मचारिणां द्वादशाक्षरविद्यया सृष्टिन्यासः

द्वादशाक्षरविद्यया करन्यासः

"अस्य श्रीमद्द्वादशाक्षरमहामन्त्रस्य, अन्तर्यामी वासुदवः ऋषिः, देवी गायत्री छन्दः परमात्मा वासुदेवो देवता, हं बीजं, क्रों शक्तिः, श्वेतवर्णं, बुद्धितत्वम्, परमं व्योम क्षेत्रं, भगवत्समाराधनार्थे

व्यापकन्यासः

"ततो दक्षिणहस्ते (इत्यारभ्य) **............. मूर्धादि पादान्तं देहे न्यसेत्"** इति

देहे संहारन्यासः

ओं यं ओम् इति पादयोः सर्वांगुळीभिः
ओं णां ओम् इति जान्वोः विनांगुष्ठसर्वांगुळीभिः
ओं यं ओम् इति गुह्ये विनांगुष्ठसर्वांगुळीभिः
ओं रां ओम् इति नाभौ अंगुष्ठ-कनिष्ठिकाभ्याम्
ओं नां ओम् इति हृदये अंगुष्ठ-तर्जनीभ्याम्
ओं मों ओम् इति मुखे अंगुष्ठ-अनामिकाभ्याम्
ओं नं ओम् इति नेत्रयोः तर्जनीमध्यमाभ्याम्
ओं ओं ओम् इति मूर्ध्नि मध्यमांगुल्या

च न्यस्य, अंगन्यासं कुर्यात् ।

"ओं ओं ओं क्रुद्धोल्काय हृदयाय .... इति तत्तन्मुद्राः प्रदश्य"

अष्टाक्षरमूर्तिध्यानमाचरेत् ।

"चतुर्भुजमुदारांगं (इत्यारभ्य) **मंत्रजापपरो भवेत्"**

एवं ध्यायेत् ।

४. ब्रह्मचारिणां द्वादशाक्षरविद्यया सृष्टिन्यासः

द्वादशाक्षरविद्यया करन्यासः

"अस्य श्रीमद्द्वादशाक्षरमहामन्त्रस्य, अन्तर्यामी वासुदवः ऋषिः, देवी गायत्री छन्दः परमात्मा वासुदेवो देवता, हं बीजं, क्रों शक्तिः, श्वेतवर्णं, बुद्धितत्वम्, परमं व्योम क्षेत्रं, भगवत्समाराधनार्थे

विनियोगः। **'ओं सहस्त्रार हुं फट्'** इति करतलकरपृष्ठौ शोधयित्वा।

ओं ओं ओं दक्षिणमध्यमांगुल्या दक्षिणकरतलमध्ये
ओं नं ओं दक्षिणतर्जन्या दक्षिणांगुष्ठपर्वे
ओं मों ओं दक्षिणांगुष्ठेन दक्षिणतर्जनीपर्वे
ओं भं ओं दक्षिणांगुष्ठेन दक्षिणमध्यमांगुळीपर्वे
ओं गं ओं दक्षिणांगुष्ठेन दक्षिणानामिकापर्वे
ओं वं ओं दक्षिणांगुष्ठेन दक्षिणकनिष्ठिकापर्वे
ओं तें ओं वामांगुष्ठेन वामकनिष्ठिकापर्वे
ओं वां ओं वामांगुष्ठेन वामकनिष्ठिकापर्वे
ओं सुं ओं वामांगुष्ठेन वामकनिष्ठिकापर्वे
ओं दें ओं वामांगुष्ठेन वामतर्जनीपर्वे
ओं वां ओं वामतर्जन्या वामांगुष्ठपर्वे
ओं यं ओं वाममध्यमांगुल्या वामकरतलमध्ये न्यस्य ।

करांगुळिषडंगन्यासः

ओं ज्ञानाय अंगुष्ठाभ्यां नमः तर्जनीभ्यामंगुष्ठयोः
ओं ऐश्वर्याय तर्जनीभ्यां स्वाहा अङ्गुष्ठाभ्यां तर्जन्योः
ओं शक्त्यै मध्यमाभ्यां वषट् अंगुष्ठाभ्यां मध्यमयोः
ओं बलाय अनामिकाभ्यां हुम् अंगुष्ठाभ्यां अनामिकयोः
ओं वीर्याय कनिष्ठिकाभ्यां फट् अंगुष्ठाभ्यां कनिष्ठयोः
ओं तेजसे नखमुखेभ्यो वौषट् तर्जनीभ्यां अंगुष्ठनखमुखयोः

अंगुष्ठाभ्यां तर्जन्यादिकनिष्ठांतनखमुखेषु न्यसेत्
व्यापकन्यासं च कुर्यात् ।।

व्यापकन्यासः

ततः दक्षिणहस्ते **'ओं पं पद्माय नमः'**, **'ओं सुदर्शनाय नमः'**, इति पद्मचक्रे न्यस्य, वामहस्ते- **'ओं नमो भगवत्यै गदायै भवरूपिण्यै कौमोदक्यै हुं फट् स्वाहा'**, **'ओं नमो भगवते पुण्डरीकाक्षाय वायुमुखाय दीप्तरूपाय शंखपालाय स्वाहा'** इति च न्यस्य, तदुत्थोज्वलतेजोभिः द्वाभ्यां हस्ताभ्यां मूर्धादि पादान्तं देहे न्यसेत् ।।

ब्रह्मचारिणां देहे सृष्टिन्यासः

ओं ओं ओं सितवर्णं मध्यमांगुल्या मूर्ध्नि
ओं नं ओं कृष्णवर्णं अंगुष्ठेन शिरसः पूर्वभागे
ओं मों ओं धूम्रवर्मं तर्जन्या शिरसः दक्षिणभागे
ओं भं ओं श्यामवर्णं अनामिकया शिरसः पश्चिमभागे
ओं गं ओं तारानिभं कनिष्ठिकया शिरसः उत्तरभागे
ओं वं ओं स्फटिकवर्णं तर्जनीमध्यमाभ्यां नेत्रयोः
ओं तें ओं शंखवर्णं अंगुष्ठानामिकाभ्यां मुखे
ओं वां ओं रक्तवर्णं अंगुष्ठतर्जनीभ्यां हृदये
ओं सुं ओं शुक्लवर्णं अंगुष्ठकनिष्ठिकाभ्यां नाभौ
ओं दें ओं लोहितवर्णं विनांगुष्ठशेषांगुळीभिः मेहने
ओं वां ओं तमोवर्णं विनांगुष्ठशेषांगुळीभिः जंघयोः
ओं यं ओं पीतवर्णं सर्वांगुळीभिः चरणयोः।। इति न्यस्य

ततो देहे षडंगन्यासः

ओं ओं ओं ज्ञानाय हृदयाय नमः
ओं नं ओम् ऐश्वर्याय शिरसे स्वाहा
ओं मों ओं शक्त्यै शिखायैवषट्

ओं भं ओं बलाय कवचाय हुम्
ओं गं ओं तेजसे नेत्राभ्यां वौषट्
ओं वं ओं वीर्याय अस्त्राय फट्
ओं तें ओं उदराय नमः
ओं वां ओं पृष्ठाभ्यां नमः
ओं सुं ओं बाहुभ्यां नमः
ओं दें ओं ऊरुभ्यां नमः
ओं वां ओं जानुभ्यां नमः
ओं यं ओं पादाभ्यां नमः

इति च तत्तन्मुद्राः प्रदर्शयन् कुर्यात् । किरीट, कुंडल, वनमाल, श्रीवत्स, कौस्तुभ, चक्र, शंख, पद्म, गदामुद्रादींश्च, पादाग्रे गरुड-मुद्रां च प्रदर्श्य, द्वादशाक्षरमूर्तिध्यानं कुर्यात् -

श्लो।। **चतुर्बाहुमुदारांगं सर्वलक्षणलक्षितम् ।**
शुद्धस्फटिकवर्णाभं अयुतेन्दुसमप्रभम् ।। १

चारुकाशं सुताम्रोष्टं कर्णान्तायतलोचनम् ।
निर्धूतपद्मरागाभं दन्तश्छविसुशोभितम् ।। २

महोरस्कं महाबाहुं प्रसन्नेंदुनिभाननम् ।
सुभ्रूललाटं सुमुखं घनकुंचितमूर्धजम् ।। ३

तटिच्छतसहस्राभ-पीतनिर्मल वाससम् ।
पाणिपादतलांभोजं पुण्डरीकायतेक्षणम् ।। ४

श्रीवत्सांकं किरीटादिसर्वाभरभूषितम् ।
पद्मचक्रगदाशंखधारिणं कौस्तुभोरसम् ।। ५

शेषाहिभोगिविपुले सुखासीनं चतुर्भुजम् ।
श्रीभूमिसहितं देवं ललाटे श्वेतमृत्स्नया ।। ६

कृतोर्ध्वपुंड्रतिलकैः मण्डितं चन्द्रभानुभिः ।
नियुतैरयुतैश्चन्द्रैः विद्युत्कालाग्निकोटिभिः ।। ७

समवेतैरिवैकत्र तेजःपुंजैर्विसर्पिभिः ।
भ्राजमानं दुरारोहं देहमंडलनिर्गतैः ।। ८

भासयन्तं जगत्सर्वं ध्यायेत्प्रक्षीणकल्मषः ।
एवं ध्यायेत् ।।

४. गृहस्थानां द्वादशाक्षरविद्यया स्थितिन्यासः

अस्य श्रीमद्द्वादशाक्षरमहामंत्रस्य (इत्यारभ्य) **शोधयित्वा**
इति -

ओं ओं ओं दक्षिणमध्यमांगुल्या दक्षिणकरतलमध्ये
ओं नं ओं दक्षिणतर्जन्या दक्षिणांगुष्ठपर्वे
ओं मों ओं दक्षिणांगुष्ठेन दक्षिणतर्जनीपर्वे
ओं भं ओं दक्षिणांगुष्ठेन दक्षिणमध्यमपर्वे
ओं गं ओं दक्षिणांगुष्ठेन दक्षिणानामिकापर्वे
ओं वं ओं दक्षिणांगुष्ठेन दक्षिणकनिष्ठिकापर्वे
ओं यं ओं वाममध्यमांगुल्या वामकरतलमध्ये
ओं वां ओं वामतर्जन्या वामांगुष्ठपर्वे
ओं दें ओं वामांगुष्ठेन वामतर्जनीपर्वे
ओं सुं ओं वामांगुष्ठेन वाममध्यमपर्वे
ओं वां ओं वामांगुष्ठेन वामानामिकापर्वे
ओं तें ओं वामांगुष्ठेन वामकनिष्ठिकापर्वे च करन्यासं कुर्यात् ।।

करतलषडंगन्यासः

ओं ज्ञानाय अंगुष्ठाभ्यां नमः, तर्जनीभ्यामंगुष्ठयोः
ओं ऐश्वर्याय तर्जनीभ्यां स्वाहा, अंगुष्ठाभ्यां तर्जन्योः
ओं शक्त्यै मध्यमाभ्यां वषट्, अंगुष्ठाभ्यां मध्यमयोः
ओं बलाय अनामिकाभ्यां हुम्, अंगुष्ठाभ्यामनामिकयोः
ओं वीर्याय कनिष्ठिकाभ्यां फट्, अंगुष्ठाभ्यां कनिष्ठयोः
ओं तेजसे नखमुखेभ्यो वौषट्, तर्जनीभ्यामंगुष्ठनखमुखयोः

अंगुष्ठाभ्यां इतरांगुळी, नखमुखेषु च करन्यासं कृत्वा, व्यापकन्यासं कुर्यात् ।।

व्यापकन्यासः

"ततो दक्षिणहस्ते (इत्यारभ्य) ....
मूर्धादि पादपर्यन्तं देहे न्यसेत्" (इति कुर्यात्)

देहे मन्त्रन्यासः (स्थितिन्यासः)

ओं सुं ओं शुक्लवर्णं अंगुष्ठकनिष्ठिकाभ्यां नाभौ
ओं दें ओं लोहितवर्णं विनांगुष्ठेन शेषांगुळीभिर्मेहने
ओं वां ओं तमोवर्णं विनांगुष्ठशेषांगुळीभिर्जंघयोः
ओं यं ओं पीतवर्णं सर्वांगुळीभिश्चरणयोः
ओं ओं ओं सितवर्णं मध्यमांगुल्या मूर्ध्नि
ओं नं ओं कृष्णवर्णं अंगुष्ठेन शिरसः पूर्वभागे
ओं मों ओं धूम्रवर्णं तर्जन्या शिरसः दक्षिणभागे
ओं भं ओं श्यामवर्णं तर्जन्या शिरसः दक्षिणभागे
ओं गं ओं तारानिभं कनिष्ठिकया शिरसः उत्तरभागे
ओं वं ओं स्फटिकवर्णं तर्जनीमध्यमाभ्यां नेत्रयोः

ओं तें ओं शंखवर्णं अंगुष्ठानामिकाभ्यां मुखे

ओं वां ओं रक्तवर्णं अंगुष्ठतर्जनीभ्यां हृदये च

देहे मन्त्रन्यासं कुर्यात् ।।

देहे अंगन्यासः

ओं ओं ओं ज्ञानाय हृदयाय नमः

ओं नं ओं ऐश्वर्याय शिरसे स्वाहा

ओं मों ओं शक्त्यै शिखायै वषट्

ओं भं ओं बलाय कवचाय हुम्

ओं गं ओं तेजसे नेत्राभ्यां वौषट्

ओं वं ओं वीर्याय अस्त्राय फट्

ओं तें ओं उदराय नमः

ओं वां ओं पृष्ठाभ्यां नमः

ओं सुं ओं बाहुभ्यां नमः

ओं दें ओं ऊरुभ्यां नमः

ओं वां ओं जानुभ्यां नमः

ओं यं ओं पादाभ्यां नमः

इति च तत्तन्मुद्राः प्रदर्शयन् कुर्यात् ।।

किरीट, कुंडल, वनमाल, श्रीवत्स, कौस्तुभ, चक्र, शंख, पद्म, गदा मुद्राश्च कृत्वा, द्वादशाक्षरमूर्तिध्यानं कुर्यात् ।।

श्लो।। **"चतुर्बाहु मुदारांगं** (इत्यारभ्य) ....

.... **ध्यायेत् प्रक्षीणकल्मषः"** इति।

५. यतीनां संहारन्यासः

अस्य श्रीमद्द्वादशाक्षरमहामन्त्रस्य (इत्यारभ्य) ....
.... **इति करतल करपृष्ठौ शोधयित्वा**

करन्यासः

ओं यं ओं वाममध्यमांगुल्या वामकरतलमध्ये
ओं वां ओं वामतर्जन्या वामांगुष्ठपर्वे
ओं दें ओं वामांगुष्ठेन वामतर्जनीपर्वे
ओं सुं ओं वामांगुष्ठेन वाममध्यमपर्वे
ओं वां ओं वामांगुष्ठेन वामानामिकापर्वे
ओं तें ओं वामांगुष्ठेन वामकनिष्ठिकापर्वे
ओं वं ओं दक्षिणांगुष्ठेन दक्षिण कनिष्ठिकापर्वे
ओं गं ओं दक्षिणांगुष्ठेन दक्षिणानामिकापर्वे
ओं भं ओं दक्षिणांगुष्ठेन दक्षिणमध्यमपर्वे
ओं मों ओं दक्षिणांगुष्ठेन दक्षिणतर्जनीपर्वे
ओं नं ओं दक्षिणांगुष्ठेन दक्षिणांगुष्ठपर्वे
ओं ओं ओं मध्यमांगुल्या दक्षिणकरतलमध्ये

न्यासं कृत्वा, करतलषडंगन्यासं कुर्यात् ।

करतलषडंगन्यासः

"**ओं ज्ञानाय अंगुष्ठाभ्यां नमः** (इत्यारभ्य) ....
.... **नखमुखेषु च करन्यासं कृत्वा व्यापकन्यासं
कुर्यात्**" इति

व्यापकन्यासः

"ततो दक्षिणहस्ते (इत्यारभ्य) .... मूर्धादिपादान्तं न्यसेत्"

इति

देहे संहारन्यासः

ओं यं ओं पीतवर्णं सर्वांगुळीभिश्चरणयोः
ओं वां ओं तमोवर्णं विनांगुष्ठशेषांगुळीभिर्जंघयोः
ओं दें ओं लोहितवर्णं विनांगुष्ठशेषांगुळीभिर्मेहने
ओं सुं ओं शुक्लवर्णं अंगुष्ठकनिष्ठिकाभ्यां नाभौ
ओं वां ओं रक्तवर्णं अंगुष्ठतर्जनीभ्यां हृदये
ओं तें ओं शंखवर्णं अंगुष्ठानामिकाभ्यां मुखे
ओं वं ओं स्फटिकवर्णं तर्जनीमध्यमाभ्यां नेत्रयोः
ओं गं ओं तारानिभं कनिष्ठिकया शिरसः उत्तरे
ओं भं ओं श्यामवर्मं अनामिकया शिरसः पश्चिमे
ओं मों ओं धूम्रवर्णं तर्जन्या शिरसः दक्षिणभागे
ओं नं ओं कृष्णवर्णं अंगुष्ठेन शिरसः पूर्वभागे
ओं ओं ओं सितवर्णं मध्यमांगुल्या मूर्ध्नि न्यसेत् ।।

देहे अंगन्यासः

ओं ओं ओं ज्ञानाय हृदयाय नमः
ओं नं ओं ऐश्वर्याय शिरसे स्वाहा
ओं मों ओं शक्त्यै शिखायै वषट्
ओं भं ओं बलाय कवचाय हुम्
ओं गं ओं तेजसे नेत्राभ्यां वौषट्
ओं वं ओं वीर्याय अस्त्राय फट्

ओं तें ओं उदराय नमः

ओं वां ओं पृष्ठाभ्यां नमः

ओं सुं ओं बाहुभ्यां नमः

ओं दें ओं ऊरुभ्यां नमः

ओं वां ओं जानुभ्यां नमः

ओं यं ओं पादाभ्यां नमः, इति च तत्तन्मुद्राः प्रदर्शयन् कुर्यात् ।।

"किरीट, कुंडल .... मुद्राः" प्रदर्श्य, द्वादशाक्षर मूर्तिध्यानं कुर्यात् ।।

श्लो।। **"चतुर्बाहुमुदारांगं** ★ (इत्यारभ्य) ....
प्रक्षीणकल्मषः ।।" इति

***

★ *वे ध्यानश्लोक ६६ पेज में दिये गये हैं ।।*

अनुबंध २

१. वेदेतिहासादिपारायणनिवेदनम्

श्रीमते नारायणाय नमः

संकल्पः - अस्य श्रीभगवतो देवदेवोत्तमस्य श्रीमदखिलांडकोटि-ब्रह्माण्डनायकस्य देवदेवस्य जगत्कुटुंबिनः जगद्रक्षणार्थमवतीर्णस्य श्री .... समेत श्री .... स्वामिनः नित्याराधनसमाप्ति समये वेद-इतिहास-पुराण-दिव्यप्रबंधादीन् अवधारय। तेषु प्रथमतः ऋग्वेदमवधारय ।।

ऋग्वेदः

हरिः ओम् अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् । होतारं रत्नधातमम् । हरिः ओम् ।

यजुर्वेदः

हरिः ओम् इषेत्वोर्जेत्वा वायवस्थोपायवस्थ देवोवस्सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमायकर्मण आप्यायध्व मघ्नियादेवभागमूर्जस्वतीः पयस्वतीः प्रजावतीरनमीवा अयक्ष्मामावस्तेन ईशतमाघशꣳ सो रुद्रस्य हेतिः परिवोवृणक्तु ध्रुवा अस्मिन्गोपतौस्यात बह्वीर्यजमानस्य पशून्पाहि । हरिः ओम् ।।

सामवेदः

हरिः ओं अग्न आयाहि वीतये गृणानो हव्यदातये । निहोता सत्सि बर्हिषि । हरिः ओम् ।

अथर्ववेदः

हरिः ओम् शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये । शंयोरभिस्रवन्तु नः ।। हरिः ओम् ।

अथर्वशिरोपनिषत्

हरिः ओम् ओमित्यग्रे व्याहरेत् । नम इति पश्चात् । नारायणायेत्युपरिष्टात् । ओमित्येकाक्षरम् । नम इति द्वे अक्षरे। नारायणायेति पंचाक्षराणि । एतद्वै नारायणस्याष्टाक्षरं पदम् । यो ह वै नारायणस्याष्टाक्षरं पदमध्येति ।

अनपब्रुवस्सर्वमायुरेति । विंदते प्राजापत्यं रायस्पोषं गौपत्यम् । ततोऽमृतत्वमश्नुते ततोऽमृतत्वमश्नुत इति । य एवं वेद । इत्युपनिषत् । हरिः ओम् ।

कल्पसूत्रम्

अथ कर्माण्याचाराद्यानि गृह्यंत उदगयन पूर्वपक्षाहः । पुण्याहेषु कार्याणि, यज्ञोपवीतिना प्रदक्षिणम्।

गृह्यसूत्रम्

अथातस्सामयाचारिकान् धर्मान्व्याख्यास्यामः, धर्मज्ञसमयः

प्रमाणं वेदाश्च, चत्वारो वर्णाः ब्राह्मणक्षत्रियवैश्यशूद्राः, तेषां पूर्वतः पूर्वो जन्मतश्श्रेयान् ।

क्षेत्रमाहात्म्यम्

(तत्तत् क्षेत्र के माहात्म्यका पाठ अनुसन्धान करना चाहिए ।)

वेंकटाद्रिसमं स्थानं ब्रह्माण्डे नास्ति किंचन ।
वेंकटेशसमो देवो न भूतो न भविष्यति ।।

इतिहासे श्रीरामायणम्

तपस्स्वाध्यायनिरतं तपस्वी वाग्विदां वरम् ।
नारदं परिपप्रच्छ वाल्मीकिर्मुनिपुंगवम् ।।

मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीस्समाः ।
यत्क्रौंचमिथुनादेकमवधीः काममोहितम् ।।

श्रीविष्णुपुराणम्

अंशैष्षड्भिस्समाकीर्णमंगैर्वेदमिवापरम् ।
पुराणं वैष्णवं चक्रे यस्तं वंदे पराशरम् ।।
पराशरं मुनिवरं कृतपौर्वाह्णिकक्रियम् ।
मैत्रेयः परिपप्रच्छ प्रणिपत्याभिवाद्य च ।।

श्रीमद्भागवतम्

जन्माद्यस्य यतोन्वयादितरत श्चार्थेष्वभिज्ञस्स्वराट्
तेने ब्रह्म हृदा य आदिकवये मुह्यन्ति यत्सूरयः ।
तेजोवारिमृदां यथा विनिमयो यत्र त्रिसर्गो मृषा
धाम्ना स्वेन सदा निरस्तकुहकं सत्यं परं धीमहि ।।

इयल्प्रबंधम्

पोय्निन्र ज्ञानमुं पोल्लावळुक्कु, मळुक्कुडंबुम्
इन्निन्र नीर्मै यिनि यामुरामै, उयिरळिप्पान् ।
एन्निन्र योनियुमाय् पिरंदायिमैयोर् तलैवा,
मेय्निन्र केट्टरुळाय्, अडियेन् शेय्युं विण्णप्पमे ।।

स्तोत्ररत्नम्

यन्मूर्ध्नि मे श्रुतिशिरस्सु च भाति यस्मिन्
अस्मन्मनोरथपथस्सकलस्समेति ।
स्तोष्यामि नः कुलधनं कुलदैवतं तत्
पादारविंदमरविंदविलोचनस्य ।।

श्रीभाष्यम्

हरिःओम् शं नो मित्रश्शं वरुणः । शंनो भवत्वर्यमा। शं न इंद्रो बृहस्पतिः । शं नो विष्णुरुरुक्रमः । नमो ब्रह्मणे । नमस्ते वायो । त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि । त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्म वदिष्यामि । ऋतं वदिष्यामि । सत्यं वदिष्यामि। तन्मामवतु । तद्वक्तारमवतु । अवतु माम् । अवतु वक्तारम्। ओं शान्तिश्शान्ति श्शान्तिः ।।

अखिलभुवनजन्मस्थेमभंगादिलीले
विनतविविधभूतव्रातरक्षैकदीक्षे ।
श्रुतिशिरसिविदीप्ते ब्रह्मणि श्रीनिवासे
भवतु मम परस्मिन् शेमुषी भक्तिरूपा ।।

पाराशर्यवचस्सुधामुपनिषद्दुग्धाब्धिमध्योद्धृतां
संसाराग्निविदीपनव्यपगत प्राणात्म संजीवनीम् ।
पूर्वाचार्यसुरक्षितां बहुमतिव्याघातदूरस्थितां
आनीतां तु निजाक्षरैस्सुमनसो भौमाः! पिबंत्वन्वहम् ।।

भगवद्बोधायनकृतां विस्तीर्णां ब्रह्मसूत्रवृत्तिं पूर्वाचार्याः संचिक्षिपुः। तन्मतानुसारेण सूत्राक्षराणि व्याख्यास्यंते । *हरिः ओम् "अथातो ब्रह्मजिज्ञासा"* । अत्रायमथशब्द आनन्तर्ये भवति, अतश्शब्दो वृत्तस्य हेतुभावे। अधीतसांगसशिरस्कवेदस्य, अधिगताल्पास्थिरफलकेवल कर्मज्ञानतया संजातमोक्षाभिलाषस्य, अनन्तस्थिरफलब्रह्मजिज्ञासा हि अनन्तरभाविनी । ब्रह्मणो जिज्ञासा - ब्रह्मजिज्ञासा । ब्रह्मण इति कर्मणि षष्ठी । *"कर्तृकर्मणोःकृति"* इति विशेषविधानात् । यद्यपि सम्बन्धसामान्य परिग्रहेऽपि जिज्ञासायाः कर्मापेक्षत्वेन कर्मार्थत्वसिद्धिः। तथापि, आक्षेपतः प्राप्तात् आभिधानिकस्यैव ग्राह्यत्वात् कर्मणि षष्ठी गृह्यते । न च *"प्रतिपदविधाना च षष्ठी न समस्यत"* इति कर्मणि षष्ठ्याः समासनिषेधश्शंकनीयः । कृद्योगा च षष्ठी समस्यत इति प्रतिप्रसवसंभवात् । ब्रह्मशब्देन च स्वभावतो निरस्तनिखिलदोषोऽनवधिकातिशयासंख्येयकल्याणगुणगणः पुरुषोत्तमोऽभिधीयते । सर्वत्र बृहत्वं च स्वरूपेण गुणैश्च । यत्रानवधिकातिशयं सोऽस्य मुख्यार्थः। स च सर्वेश्वर एव । अतो ब्रह्मशब्दस्तत्रैव मुख्यवृत्तः । तस्मात्, अन्यत्र तद्गुणलेशयोगात् औपचारिकः । अनेकार्थकल्पनायोगात् भगवच्छब्दवत् । तापत्रयातुरैरमृतत्वाय स एव जिज्ञास्यः। अत स्सर्वेश्वर एव जिज्ञासाकर्मभूतं ब्रह्म । ज्ञातुमिच्छा जिज्ञासा । इच्छाया इष्यमाणप्रधानत्वात्, इष्यमाणं ज्ञानमिह विधीयते। मीमांसापूर्वभागज्ञातस्य कर्मणः अल्पास्थिरफलत्वात्, उपरितनभागावसेयस्य ब्रह्मज्ञानस्य अनन्त-

स्थिरफलत्वात् च पूर्ववृत्तात् कर्मज्ञानात् अनन्तरं तत एव हेतोः ब्रह्म ज्ञातव्यमित्युक्तं भवति ।।

हरिः ओं शन्नो मित्रश्शं वरुणः । शंन्नो भवत्वर्यमा । शं न इंद्रो बृहस्पतिः । शं नो विष्णुरुरुक्रमः । नमो ब्रह्मणे। नमस्ते वायो । त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि । त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मावादिषम् । ऋतमवादिषम् । सत्यमवादिषम् । तन्मामावीत्। तद्वक्तारमावीत् । आवीन्माम् । आवीद्वक्तारम्। ओं शान्तिश्शान्तिश्शान्तिः ।।

श्रीमद्भगवद्गीता

धृतराष्ट्र उवाच -

धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता युयुत्सवः ।
मामकाः पांडवाश्चैव किमकुर्वत संजय! ।।

श्रीवरदराजस्तवः

स्वस्ति हस्तिगिरिमस्तशेखरस्संतनोतु मयि संततं हरिः।
निस्समाभ्यधिकमभ्यधत्त यं देवमौपनिषदी सरस्वती ।।

श्रीरंगराजस्तवः

अमतं मतं मतमथामतं स्तुतं
परिनिंदितं भवति निंदितं स्तुतम् ।
इति रंगराजमुदजूघुषत् त्रयी
स्तुमहे वयं किमिति तन्नशक्नुमः ।।

यतिराजविंशतिः

श्रीमाधवांघ्रिजलजद्वयनित्यसेवा
प्रेमाविलाशयपरांकुशपादभक्तम् ।
कामादिदोषहरमात्मपदाश्रितानां
रामानुजं यतिपतिं प्रणमामि मूर्ध्ना ।।

(इस के बाद दिव्यप्रबन्ध पाठ का अनुसन्धान कर के तत्पश्चात् भोज्यासन)

२. मंगळाशासनम्

श्रियःकान्ताय कल्याणनिधये निधयेऽर्थिनाम् ।
श्रीवेंकटनिवासाय श्रीनिवासाय मंगळम् ।। १
लक्ष्मीचरणलाक्षांकसाक्षिश्रीवत्सवक्षसे ।
क्षेमंकराय सर्वेषां श्रीरंगेशाय मंगळम् ।। २
अस्तु श्रीस्तनकस्तूरिवासनावासितोरसे ।
श्रीहस्तिगिरिनाथाय देवराजाय मंगळम् ।। ३
कमलाकुचकस्तूरिकर्दमांकितवक्षसे ।
यादवाद्रिनिवासाय संपत्पुत्राय मंगळम् ।। ४
नीलाचलनिवासाय नित्याय परमात्मने ।
सुभद्राप्राणनाथाय जगन्नाथाय मंगळम् ।। ५
स्वोच्छिष्टमालिकाबंधगंधबंधुरजिष्णवे ।
विष्णुचित्ततनूजायै गोदायै नित्यमंगळम् ।। ६
श्रीनगर्यां महापुर्यां ताम्रपर्ण्युत्तरे तटे ।
श्रीतिंत्रिणीमूलधाम्ने शठकोपाय मंगळम् ।। ७
शेषो वा सैन्यनाथो वा श्रीपतिर्वेति सात्विकैः ।
वितर्क्याय महाप्राज्ञैः भाष्यकाराय मंगळम् ।। ८
तुलामूलावतीर्णाय तोषिताखिलसूरये ।
सौम्यजामातमुनये शेषांशायास्तु मंगळम् ।। ९

मंगळाशासनपरैः मदाचार्यपुरोगमैः ।
सर्वैश्च पूर्वैराचार्यैः सत्कृतायास्तु मंगळम् ।। १०

ओम् तद्विष्णो परमं पद॑ सदा पश्यंति सूरयः । दिवीव चक्षुराततम् । तद्विप्रासो विपन्यवो जागृवांसस्समिंधते विष्णोर्यत्परमं पदम् । पर्याप्त्या अनन्तरायाय सर्वस्तोमोतिरात्र उत्तममहर्भवति सर्वस्याप्त्यै सर्वस्य जित्यै सर्वमेव तेनाप्रोति सर्वं जयति । हरिः ओम् ।।

३. मंत्रपुष्पम्

हरिः ओम्।। सहस्रशीर्षं देवं विश्वाक्षं विश्वशंभुवम्। विश्वं नारायणं देवमक्षरं परमं प्रभुम्। विश्वतः परमं नित्यं विश्वं नारायण॑ हरिम्। विश्वमेवेदं पुरुषस्तद्विश्वमुपजीवति। पतिं विश्वस्यात्मेश्वर॑ शाश्वत॑ शिवमच्युतम् । नारायणं महाज्ञेयं विश्वात्मानं परायणम्। नारायणपरं ब्रह्म तत्त्वं नारायणः परः । नारायण परोज्योतिरात्मा नारायणः परः। यच्च किंचिज्जगत्यस्मिन् दृश्यते श्रूयतेपिवा । अंतर्बहिश्च तथ्सर्वं व्याप्य नारायणस्स्थितः । अनन्तमव्ययं कवि॑ समुद्रेन्तं विश्वशंभुवम् । पद्मकोशप्रतीकाश॑ हृदयं चाप्यधोमुखम् । अथो निष्ठ्या वितस्त्यां तु नाभ्यामुपरितिष्ठति। हृदयं तद्विजानीयाद्विश्वस्यायतनं महत्।

संततꣳ शिराभिस्तु लंबत्या कोशसन्निभम्। तस्यान्ते सुषिरꣳ सूक्ष्मं तस्मिंथ्सर्वं प्रतिष्ठितम्। तस्य मध्ये महानग्निर्विश्वार्चिर्विश्वतोमुखः। सोग्रभुग्विभजन् तिष्ठन्नाहार मजरः कविः। संतापयति स्वं देहमापादतलमस्तकम्। तस्य मध्ये वह्निशिखा अणीयोर्ध्वा व्यवस्थितः। नीलतोयद मध्यस्था विद्युल्लेखेव भास्वरा। नीवारशूकवत्तन्वी पीताभास्यात्तनूपमा। तस्याश्शिखाया मध्ये परमात्मा व्यवस्थितः। स ब्रह्मा स शिवस्सेन्द्रस्सोक्षरः परमस्वराट्। ऋतꣳ सत्यं परं ब्रह्म पुरुषं कृष्णपिंगलम्। ऊर्ध्वरेतं विरूपाक्षं विश्वरूपायवै नमः।

ओं नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि। तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्।

ओं महादेव्यै च विद्महे विष्णुपत्न्यै च धीमहि। तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात्।

४. शात्तुमुरै *(शान्तिपाठः)*

सर्वदेशदशाकालेष्वव्याहतपराक्रमा।
रामानुजार्यदिव्याज्ञा वर्धतामभिवर्धताम्॥

रामानुजार्यदिव्याज्ञा प्रतिवासरमुज्ज्वला।
दिगंतव्यापीनी भूयात् सा हि लोकहितैषिणी॥

श्रीमन्! श्रीरंगश्रियमनुपद्रवामनुविनं संवर्धय ।
श्रीमन्! श्रीरंगश्रियमनुपद्रवामनुदिनं संवर्धय ।।

नमश्श्रीशैलनाथाय कुंतीनगरजन्मने ।
प्रसादलब्धपरमप्राप्यकैंकर्यशालिने ।।

श्रीशैलेशदयापात्रं धीभक्त्यादिगुणार्णवम् ।
यतीन्द्रप्रवणं वंदे रम्यजामातरं मुनिम् ।।

वाऴि तिरुवाय् मोऴिप्पिळ्ळै मादकवाळ् वाऴुम्।
मणवाळमामुनिवन् वाऴियवन् ।
मारन्तिरुवाय् मोऴिप्पोरुळै मानिलत्तोर् तेरुंबडि युरैक्कुं शीर् ।
शेय्य तामरैत्ताळिणै वाऴिये ।
शेलै वाऴि तिरुनाभि वाऴिये ।
तुय्यमार्बुं पुरिनूलुं वाऴिये ।
शुन्दरत्तिरुत्तोळिणै वाऴिये ।
कैयुमेन्दिय मुक्कोलुं वाऴिये ।
करुणै पोंगिय कण्णिणै वाऴिये ।
पोय्यिलाद मणवाळमामुनि पुंदिवाऴ् पुगऴ् वाऴि वाऴिये ।।

अडियार्गळ् वाऴ, अरंगनगर् वाऴ
शडगोपन् तण् तमिऴ् नूल् वाऴ ।

कडल् शूऴ्न्द मन्नुलगं वाऴ
मणवाळ मामुनिये इन्नुमोरुनूत्ताण्डिरुम् ।।

श्रीमते रम्यजामातृमुनींद्राय महात्मने ।
श्रीरंगवासिने भूयात् नित्यश्रीर्नित्यमंगळम् ।।

❋ ❋ ❋

अनुबंध ३

(पुष्पार्चना आरम्भ करते समय पहले इन २४ व्यूहनामों से अर्चना करनी चाहिए।)

ओं केशवाय नमः
ओं नारायणाय नमः
ओं माधवाय नमः
ओं गोविन्दाय नमः
ओं विष्णवे नमः
ओं मधुसूदनाय नमः
ओं त्रिविक्रमाय नमः
ओं वामनाय नमः
ओं श्रीधराय नमः
ओं हृषीकेशाय नमः
ओं पद्मनाभाय नमः
ओं दामोदराय नमः १२

ओं संकर्षणाय नमः
ओं वासुदेवाय नमः
ओं प्रद्युम्नाय नमः
ओं अनिरुद्धाय नमः
ओं पुरुषोत्तमाय नमः
ओं अधोक्षजाय नमः
ओं नारसिंहाय नमः
ओं अच्युताय नमः
ओं जनार्दनाय नमः
ओं उपेंद्राय नमः
ओं हरये नमः
ओं श्रीकृष्णाय नमः २४

(तत्तत् अष्टोत्तरशतनामार्चना पूरा होने के बाद इन निम्ननामों का अनुसन्धान करना चाहिए ।)

ओं श्रीमहालक्ष्मै नमः
ओं श्री भूदेव्यै नमः
ओं श्री नीळादेव्यै नमः
ओं श्री गोदादेव्यै नमः
ओं श्री अनंताय नमः
ओं श्री गरुडाय नमः
ओं श्रीमते विष्वक्सेनाय नमः
ओं श्रीपरांकुशाय नमः

ओं श्रीमते रामानुजाय नमः
ओं श्रीमद्वरवरमुनये नमः
ओं स्वाचार्येभ्यो नमः
ओं पूर्वाचार्येभ्यो नमः
ओं समस्तपरिवाराय सर्वदिव्य-
मंगळविग्रहाय-
श्रीमते नारायणाय नमः

श्रीरामानुजाष्टोत्तरशतनामावळिः

ओं श्रीरामानुजाय नमः
ओं पुष्कराक्षाय नमः
ओं यतीन्द्राय नमः
ओं करुणाकराय नमः
ओं कान्तिमत्यात्मजाय नमः
ओं श्रीमते नमः
ओं लीलामानुषविग्रहाय नमः
ओं सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञाय नमः
ओं सर्वज्ञाय नमः
ओं सज्जनप्रियाय नमः १०
ओं नारायणकृपापात्राय नमः
ओं श्रीभूतपुरनायकाय नमः
ओं अनघाय नमः
ओं भक्तमन्दाराय नमः
ओं केशवानन्दवर्धनाय नमः
ओं काञ्चीपूर्णप्रियसखाय नमः
ओं प्रणतार्तिविनाशनाय नमः
ओं पुण्यसंकीर्तनाय नमः
ओं पुण्याय नमः
ओं ब्रह्मराक्षसमोचकाय नमः २०
ओं यादावापादितापार्थ -
वृक्षच्छेदकुठारकाय नमः
ओं अमोघाय नमः
ओं लक्ष्मणमुनये नमः
ओं शारदाशोकनाशनाय नमः
ओं निरन्तरजनाज्ञाननिर्मोचन-
विचक्षणाय नमः
ओं वेदान्तद्वयसारज्ञाय नमः
ओं वरदायाम्बुदायकाय नमः
ओं परेङ्गितज्ञाय नमः
ओं नीतिज्ञाय नमः
ओं यामुनाङ्गुलिमोचकाय नमः ३०
ओं देवराकृपालब्ध-
षड्वाक्यार्थमहोदधये नमः
ओं पूर्णार्यलब्धसन्मन्त्राय नमः
ओं शौरिपादाब्जषट्पदाय नमः
ओं त्रिदण्डधारिणे नमः
ओं ब्रह्मज्ञाय नमः
ओं ब्रह्मध्यानपरायणाय नमः
ओं रङ्गेशकैङ्कर्यरताय नमः
ओं विभूतिद्वयनायकाय नमः
ओं गोष्ठीपूर्णकृपालब्ध-
मन्त्रराजप्रकाशकाय नमः
ओं वररङ्गानुकम्पात्त-
द्राविडाम्नयपारगाय नमः ४०

ओं मालाधरार्यसुज्ञात -
द्राविडाम्नयतत्त्वधिये नमः
ओं चतुस्सप्ततिशिष्याढ्याय नमः
ओं पञ्चाचार्यसमाश्रयाय नमः
ओं प्रपीतविषतीर्थाम्भः-
प्रकटीकृतवैभवाय नमः
ओं प्रणतार्तिहराचार्य-
दत्तभिक्षैकभोजनाय नमः
ओं पवित्रीकृतकूरेशाय नमः
ओं भागिनेयत्रिदण्डकाय नमः
ओं कूरेशदाशरथ्यादिचरमार्थ-
प्रदायकाय नमः
ओं रङ्गेशवेङ्कटेशादि -
प्रकटीकृतवैभवाय नमः
ओं देवराजार्चनरताय नमः ५०
ओं मूकमुक्तिप्रदायकाय नमः
ओं यज्ञमूर्तिप्रतिष्ठात्रे नमः
ओं मन्नाथाय नमः
ओं धरणीधराय नमः
ओं वरदाचार्यसद्भक्ताय नमः
ओं यज्ञेशार्तिविनाशकाय नमः
ओं अनन्ताभीष्टफलदाय नमः
ओं विट्ठलेन्द्रप्रपूजिताय नमः
ओं श्रीशैलपूर्णकरुणालब्ध -
रामायणार्थकाय नमः
ओं प्रपत्तिधर्मैकरताय नमः ६०
ओं गोविन्दार्यप्रियानुजाय नमः
ओं व्याससूत्रार्थतत्त्वज्ञाय नमः
ओं बोधायनमतानुगाय नमः
ओं श्रीभाष्यादिमहाग्रन्थ -
कारकाय नमः
ओं कलिनाशनाय नमः
ओं अद्वैतमतविच्छेत्रे नमः
ओं विशिष्टाद्वैतपालकाय नमः
ओं कुरङ्गनगरीपूर्णमन्त्र-
रत्नोपदेशकाय नमः
ओं विनाशिताखिलमताय नमः
ओं शेषीकृतरमापतये नमः ७०
ओं पुत्रीकृतशठारातये नमः
ओं शठारात्यृणमोचकाय नमः
ओं भाषादत्तहयग्रीवाय नमः
ओं भाष्यकाराय नमः
ओं महायशसे नमः
ओं पवित्रीकृतभूभागाय नमः
ओं कूर्मनाथप्रकाशकाय नमः
ओं श्रीवेंकटाचलाधीश-
शंखचक्रप्रदायकाय नमः
ओं श्रीवेंकटेशश्वशुराय नमः
ओं श्रीरमासखदेशिकाय नमः ८०

ओं कृपामात्रप्रसन्नार्याय नमः
ओं गोपिकामोक्षदायकाय नमः
ओं समीचीनार्यसच्छिष्य -
सत्कृताय नमः
ओं वैष्णवप्रियाय नमः
ओं क्रिमिकण्ठनृपध्वंसिने नमः
ओं सर्वमन्त्रमहोदधये नमः
ओं अङ्गीकृतान्ध्रपूर्णाख्याय नमः
ओं सालग्रामप्रतिष्ठिताय नमः
ओं श्रीभक्तग्रामपूर्णेशाय नमः
ओं विष्णुवर्धनरक्षकाय नमः ९०
ओं बौद्धध्वान्तसहस्रांशवे नमः
ओं शेषरूपप्रदर्शकाय नमः
ओं नगरीकृतवेदाद्रये नमः
ओं दिल्लीश्वरसमर्चिताय नमः
ओं नारायणप्रतिष्ठात्रे नमः
ओं संपत्पुत्रविमोचकाय नमः
ओं संपत्कुमारजनकाय नमः
ओं साधुलोक शिखामणये नमः
ओं सुप्रतिष्ठितगोविन्दराजाय नमः
ओं पूर्णमनोरथाय नमः १००
ओं गोदाग्रजाय नमः
ओं दिग्विजेत्रे नमः
ओं गोदाभीष्टप्रपूरकाय नमः
ओं सर्वसंशयविच्छेत्रे नमः
ओं विष्णुलोकप्रदायकाय नमः
ओं अव्याहतमहद्वर्त्मने नमः
ओं यतिराजाय नमः
ओं जगद्गुरवे नमः १०८
ओं श्रीमते रामानुजाय नमः

इति श्रीरामानुजाष्टोत्तरशतनामावळिःसमाप्ता ।।

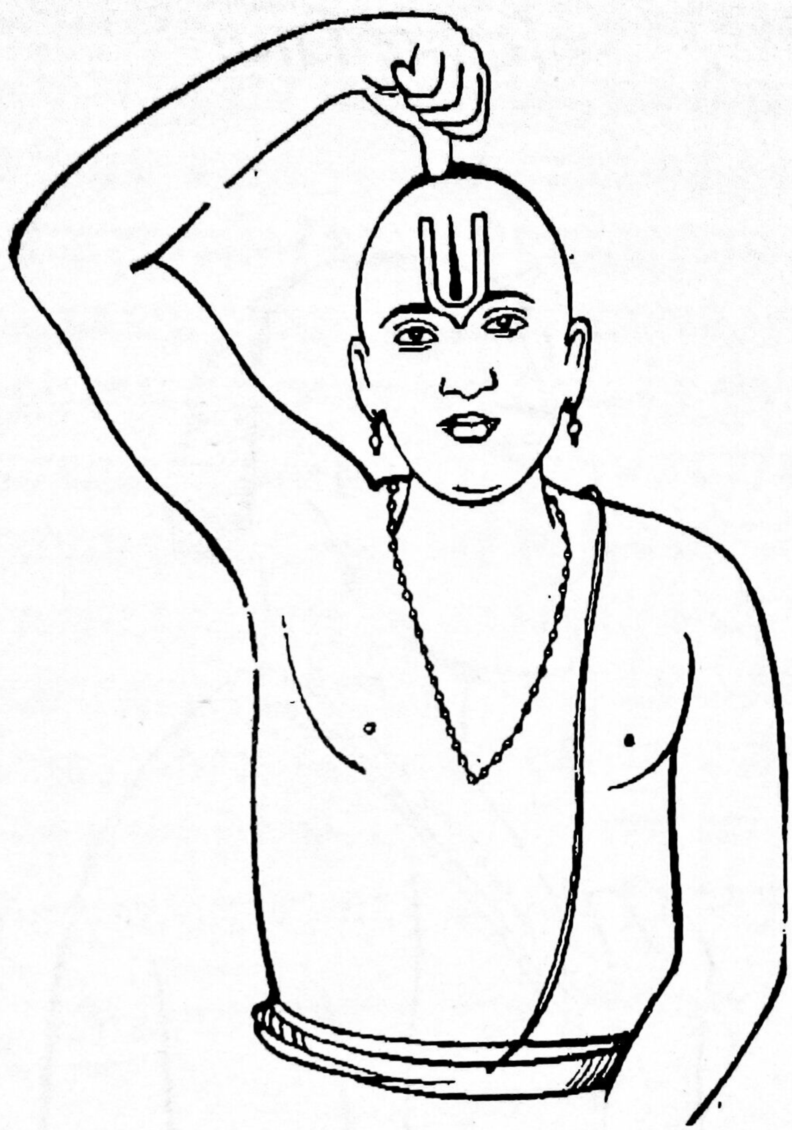
अनुबंध ४

सचित्रमुद्राविधिः



हृदयमुद्रा

१. अनामिकामध्यमयोः प्रवेश्याङ्गुष्ठमायतम् ।
विधाय मुष्टिं हृदये न्यसेद्धृदयमुद्रिका ।।



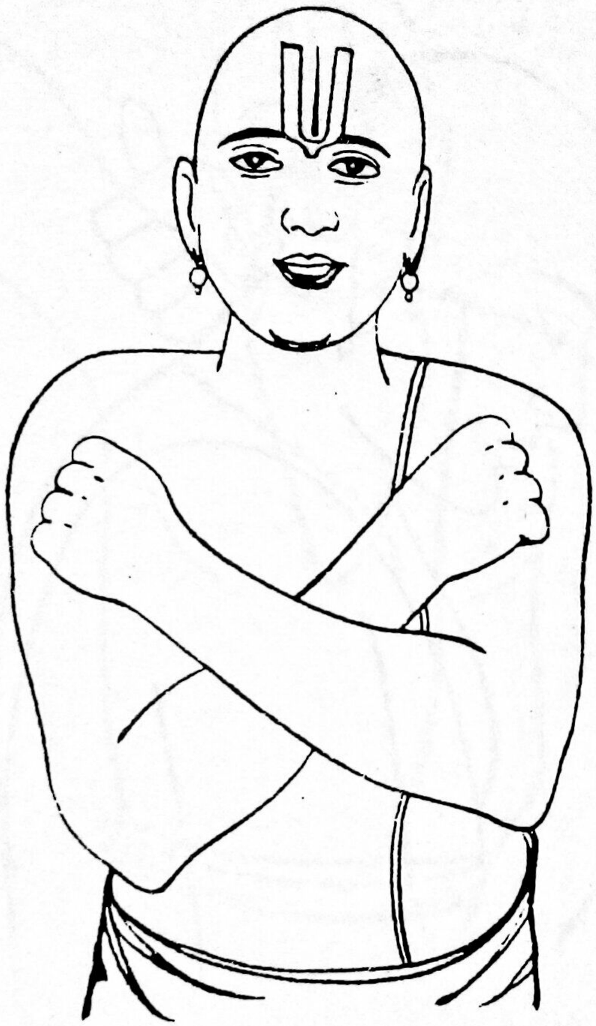
शीर्षमुद्रा

२. सैषा मुष्टिमथो बध्वा स्थापयित्वा च मूर्धनि ।
अङ्गुष्ठाग्रेण हननं तर्जन्या शीर्षमुद्रिका ।।



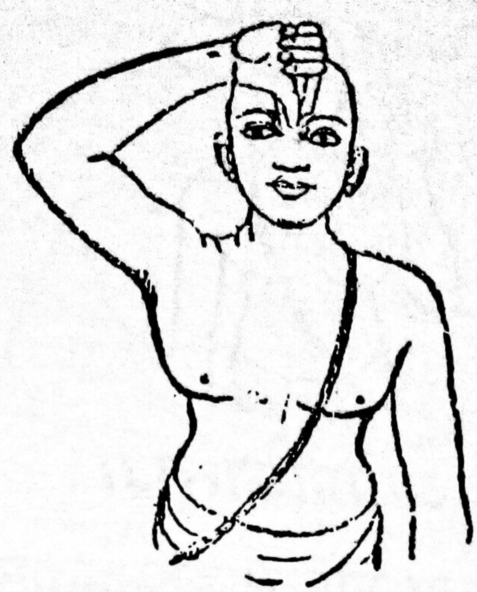
शिखामुद्रा

३. ऊर्ध्वाङ्गुष्ठं दृढं मुष्टिं बध्वा न्यस्येच्छिखापदे ।
शिखामुद्रेयमुदिता .... ॥



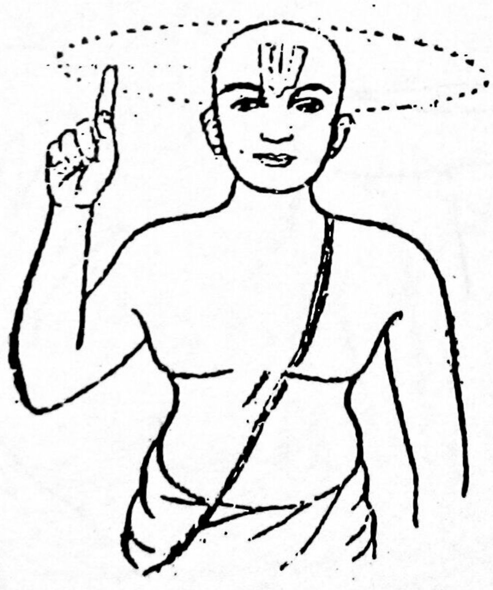
कवचमुद्रा

४. प्रवेश्याभ्यन्तरांगुष्ठं बध्वा मुष्टिप्रवेशनम् ।
उन्नम्य किञ्चिदग्रे च वितताने‍न मुष्टिना ।।
भावयेद्वर्मणो बन्धं सैषा कवचमुद्रिका ।।



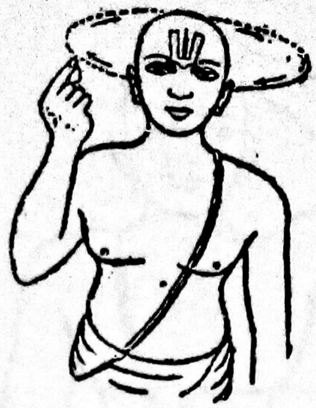
नेत्रमुद्रा

५. शिखामुद्रामधोमुखीम् .... ।
विन्यसेत्तां भ्रुवोर्मध्ये नेत्रमुद्रेयमीरिता ।
षडङ्गमुद्रास्वेतासु हस्तस्सर्वत्र दक्षिणः ।।



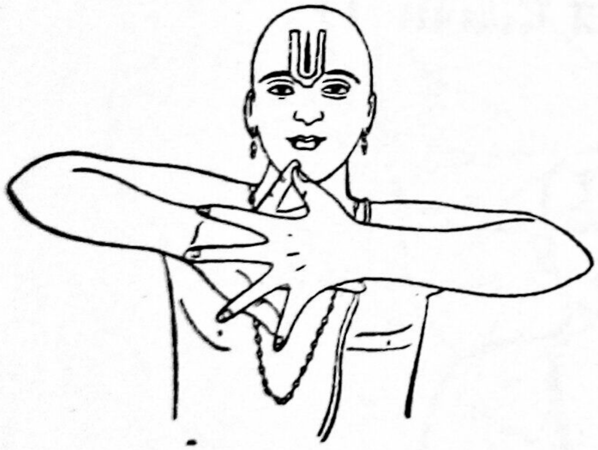
अस्त्रमुद्रा

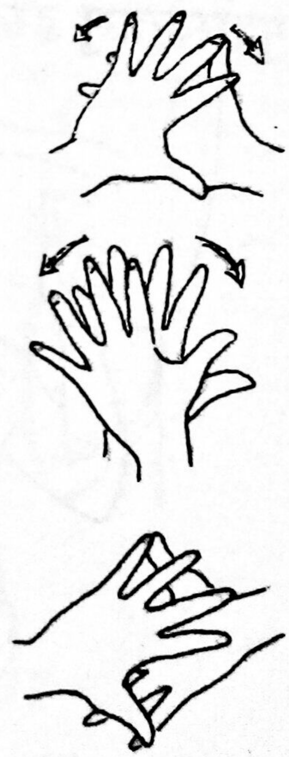
६. तर्जन्यंगुष्ठशिरसि स्फोटयेच्चक्रवत् स्मरन् ।
दिक्षु सर्वासु शेषाभिः मुष्टिं बध्वा चतुर्मुख! ।।



अग्निप्राकारमुद्रा

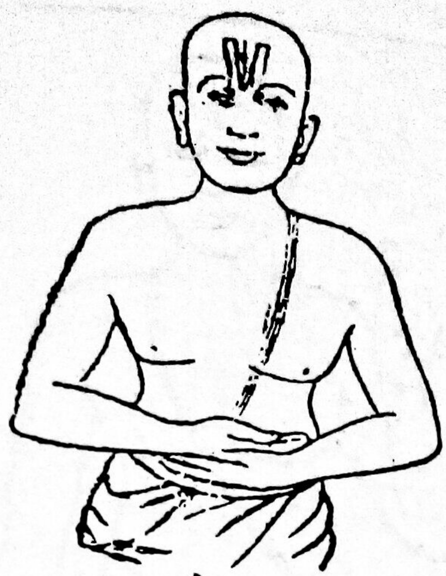
७. कनिष्ठादित्रिभिर्बध्वा मुष्टिं साङ्गुष्ठमुन्नताम् ।
विधाय तर्जनीं तेन भ्रामयेदाशु चक्रवत् ।
अग्निप्राकारमुद्रेयं तयैवात्माभिरक्षणम् ।।





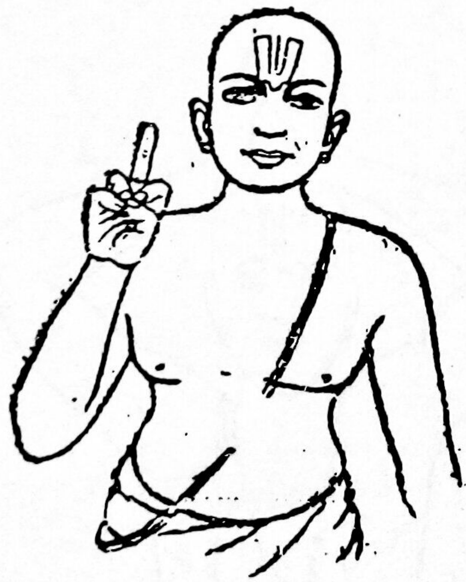
चक्रमुद्रा

८. मणिबन्धसमौ हस्तौ तिर्यक्संभ्राम्य चक्रवत् ।
पर्यायेण प्रयोक्तव्या चक्रमुद्रा महोदय! ।।



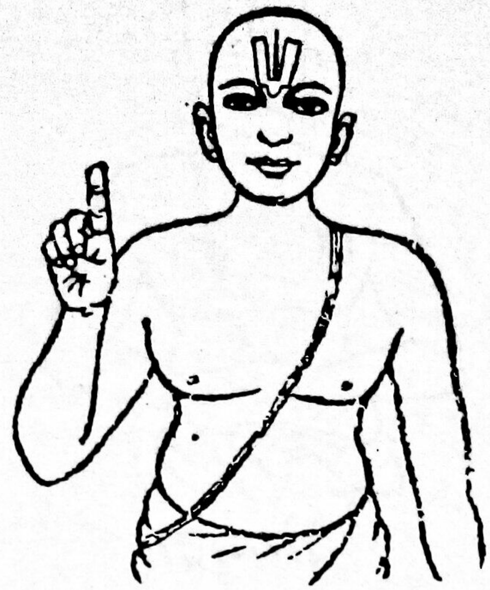
योगमुद्रा

९. नाभेरधस्ताद्विन्यस्य सव्यं करतलं पुनः ।
उत्तानमितरं तस्य विन्यसेदुपरीदृशी ।।



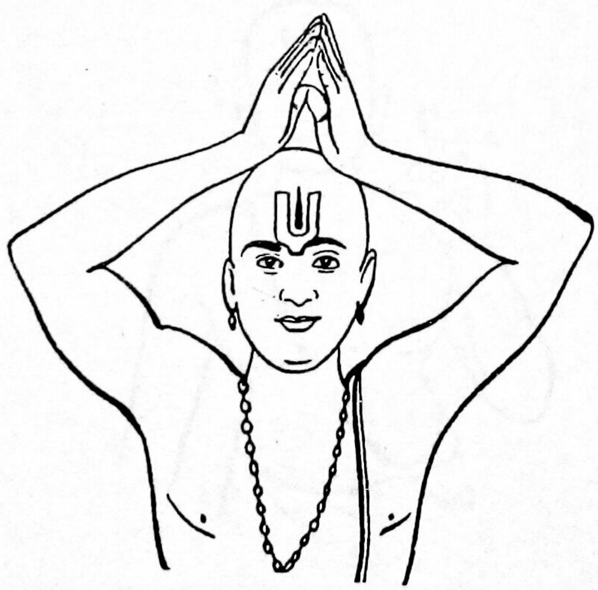
संहारमुद्रा

१०. तर्जन्यानामिकाग्रं तु वेष्टयित्वा क्रमेण तत् ।
तथाङ्गुष्ठकनिष्ठौ तु ज्ञेया संहारमुद्रिका ।।



सृष्टिमुद्रा

११. संहताभिश्चतसृभिरङ्गुलीभिश्च संगतिः ।
विमुक्ततर्जनी भूयस्सृष्टिमुद्रेति कीर्तिता ।।



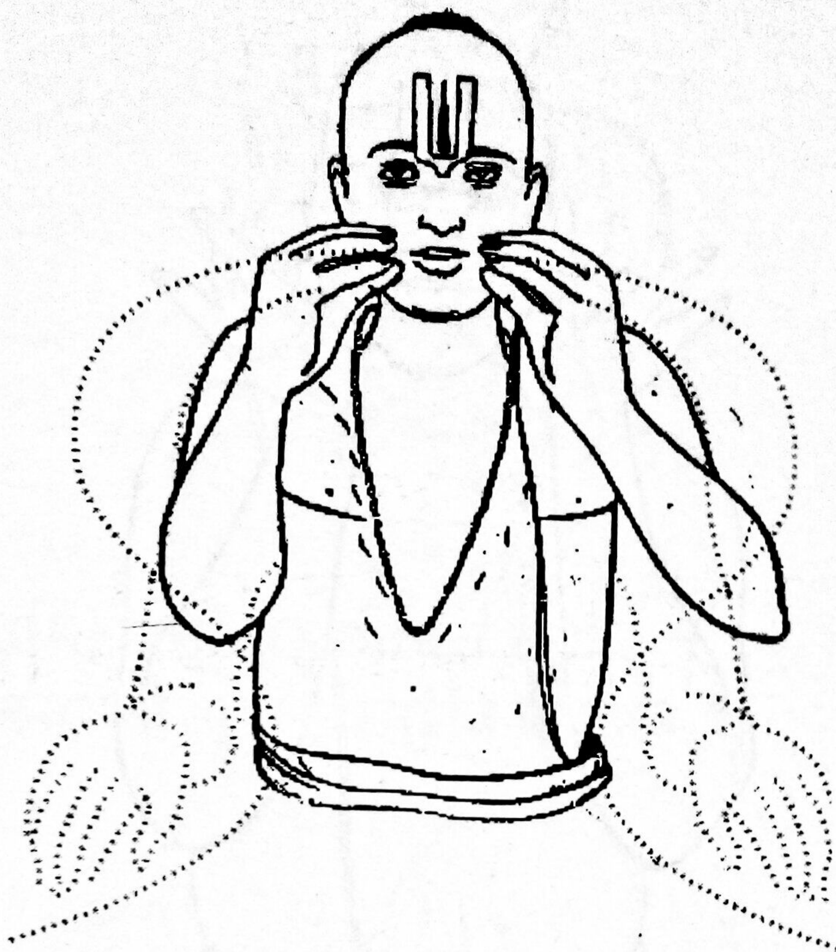
किरीटमुद्रा

१२. हस्तौ मुकुळितौ कृत्वा न्यसेच्छिरसि मन्त्रतः ।
किरीटमुद्रा सा ज्ञेया ।।



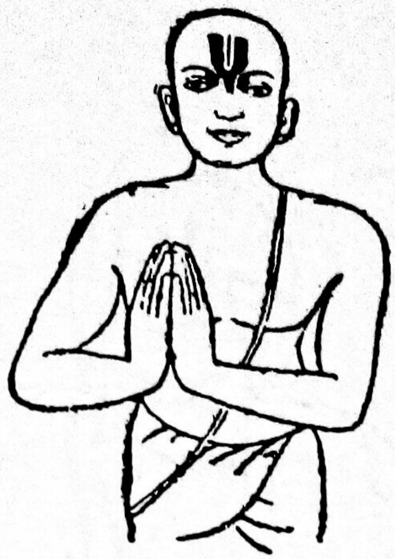
कुंडलमुद्रा

१३. हस्तद्वयांगुष्ठानामिकाभ्यां
कर्णयोः अधोभागं स्पृशेत् ।।



वनमालमुद्रा

१४. हस्ताभ्यां लंबयेद् ब्रह्मन्!
अंगुल्यग्रैः परस्परम् ।
बन्धयेद्वनमाला स्यात्
अंगुष्ठौ द्वौ तु संहरेत् ।।



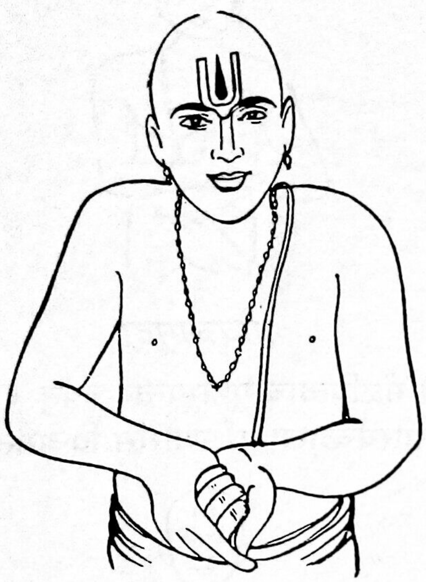
श्रीवत्समुद्रा

१५.मणिबंधौ मेळयित्वाचांगुष्ठाभ्यन्तरं नयेत् ।
शेषाः प्रसारयेच्छाखा दक्षिणोरसि विन्यसेत् ।।



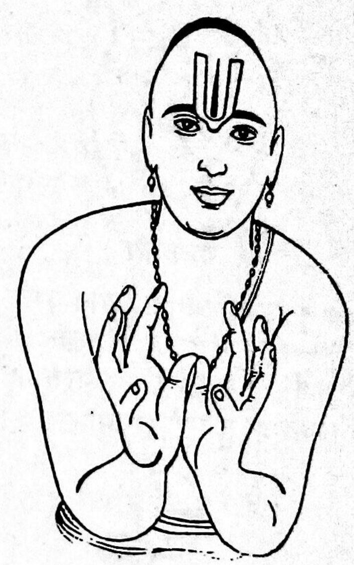
कौस्तुभमुद्रा

६.अंगुष्ठौ च कनिष्ठौ च प्रवेश्यान्तश्च हस्तयोः ।
शिष्टांगुळीनामग्राणि मेलयित्वा परस्परम् ।।
एषा कौस्तुभमुद्रेति वामवक्षसि विन्यसेत् ।।



शङ्खमुद्रा

१७.निबध्य दक्षिणांगुष्ठं वामहस्तस्य मुष्टिगम् ।
कृत्वा चांगुष्ठतर्जन्यौ संयुक्ते प्रसृते समे ।
तिस्रस्तु दक्षिणन्यासा बध्नीयुर्मुष्टिमूर्ध्वगाः ।
शंखमुद्रेयमुदिता ज्ञानदा मोक्षदा चिरात् ।।



पद्ममुद्रा

१८.प्रसार्य करजान् सर्वान् मणिबन्धौ समेत्य तौ ।
अन्तः प्रवेश्य चांगुष्ठौ तयोः पृष्ठमनुस्पृशेत् ।।
प्रसारयेत्पद्ममुद्रामासने तु प्रदर्शयेत् ।।



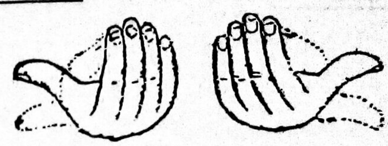
गदामुद्रा

१९. मुष्टिं कृत्वा तु हस्ताभ्यामंगुष्ठौ विनतावुभौ ।
मध्यमांगुलियुग्मं तु ऋजुमूर्ध्वं प्रसारयेत् ।
शेषाभिरंगुलीभिस्तु बन्धयेयुः परस्परम् ।
संश्लिष्टौ कूर्परौ द्वौ तु गदामुद्रेयमीरिता ।।



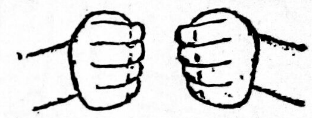
गरुडमुद्रा

२०. उभौ करतले पृष्ठौ संश्लिष्टौ तु कनिष्ठिकौ ।
बन्धयेत्तर्जनीयुग्मं प्रसरेत्तुण्डवत्क्रमात् ।
अंगुष्ठौ द्वौ पादयुग्ममधस्ताल्लम्बयेत्क्रमात् ।
मध्यमानामिकाभ्यां तु करयोरुभयोरपि ।
पक्षवच्चलनं कुर्यात् ज्ञेया गरुडमुद्रिका ।।



सन्निधिमुद्रा

२१. उत्तानौ संहतौ पाणी
कृत्वांगुष्ठद्वयेन तु ।
स्वां स्वां कनिष्ठां विमृजेत्
एषा सन्निधिमुद्रिका ।।



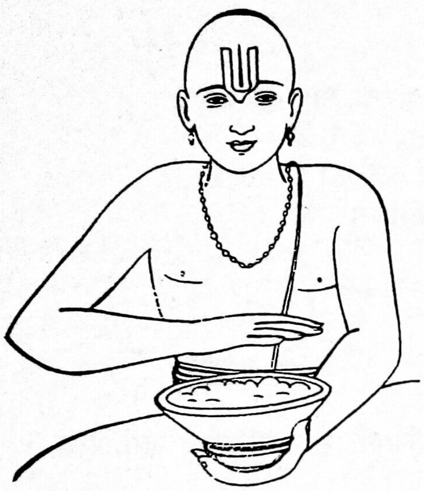
सन्निरोधमुद्रा

२२. अंगुष्ठगर्भिणी सैव सन्निरोधे समीरिता ।



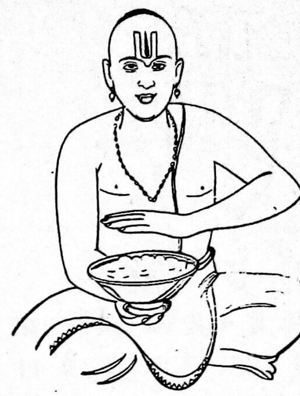
साम्मुख्यमुद्रा

२३ ईषद्विकसितं कुर्यादंजलिं कमलेक्षण! ।
एषा साम्मुख्यमुद्रा स्यात् सम्मुखीकरणे हरेः ।।



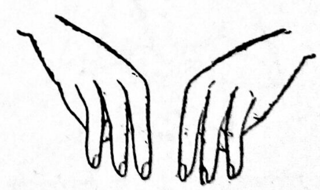
शोषणमुद्रा

२४. अपसव्यकरतलस्थित
वस्तुजातं सव्येन शोषयेत् ।।



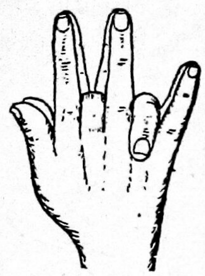
दहनमुद्रा

२५. अपसव्ये करतले संस्मरेद्रक्तपंकजम् ।
तन्मध्ये चिन्तयेदग्निं त्रिकोणं तेजसां निधिम् ।।
अवाङ्मुखं करतलं कृत्वा द्रव्योपरि न्यसेत् ।
ज्ञेया दहनमुद्रैषा द्रव्यशुद्धिप्रदा सदा ।।



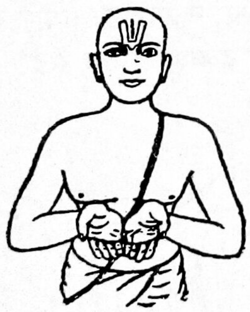
स्थापनमुद्रा

२६. हस्तावधोमुखौ कृत्वा चांगुष्ठामप्यनामिके ।
संमृजेत् स्थापने देवि! विनियोगो भवेदयम् ।।



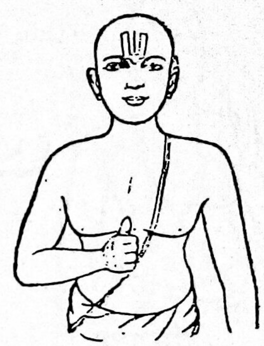
सुरभिमुद्रा

२७. अंगुष्ठे द्वे कनिष्ठे द्वे तथा स्यात्तर्जनी द्वयोः ।
शिष्टं प्रसारयेद् ब्रह्मन्नंगुलानि करद्वये ।।
मध्यमां दक्षिणकरेऽनामिकां च तथेतरे ।
संहत्य प्रसरेच्छेषं करयोरुभयोरपि ।।
ज्ञेया सुरभिमुद्रा सा यागद्रव्यविशोधिनी ।।



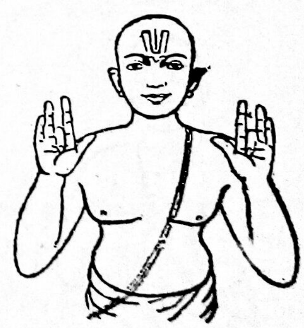
स्वागतमुद्रा - प्रार्थनामुद्रा

२८.उत्तानीकृत्य हस्तं च वक्रिताङ्गुलिभिः क्रमात् ।
अंगुष्ठं च पृथक्कृत्य ज्ञेया स्वागतमुद्रिका ।
साचैव प्रार्थनामुद्रा सा चैषा यानमुद्रिका ।।



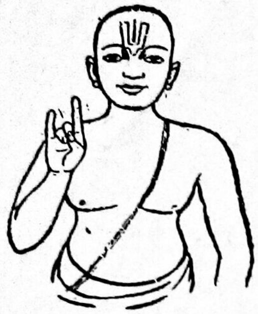
प्रतिमामुद्रा

२९.याचाप्यूर्ध्वकृताङ्गुष्ठां शेषाभिर्मुष्टिभिः कृता ।
सा ज्ञेया प्रतिमा मुद्रा देवदेवप्रियावहा ।।



न्यासमुद्रा

३०. ऊर्ध्वयोः करयोर्मध्यं मध्यमाभ्यां तु संस्पृशेत् ।
उत्तानितौ करौ कृत्वा न्यासमुद्रा निगद्यते ।
देवात्मदेहयोर्मन्त्रं न्यासमुद्रेयमीरिता ।।



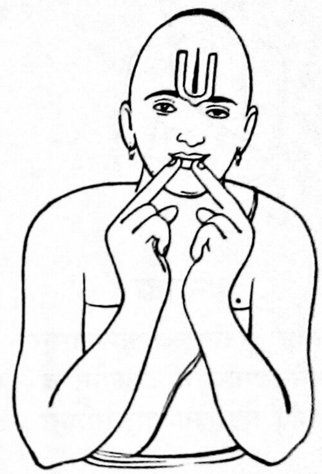
होममुद्रा

३१. मध्यमानामिकाभ्यां तु अङ्गुष्ठाग्रेण सङ्गतिः ।
कनिष्ठतर्जनीयुग्मं दीर्घीकृत्य यथातथम् ।।
तिलव्रीहियवादीनां होमकर्मणि शस्यते ।।



धूपमुद्रा

३२. संहताग्राङ्गुलीनां तु कृत्वा व्यतिकराङ्गुलीः ।
सहैवोर्ध्वीकृतांगुष्ठौ कराभ्यां धूपमुद्रिका ।।



दीपमुद्रा

३३. ऊर्ध्वं तु मध्यमां कृत्वा संहत्यांगुष्ठमेव च ।
तर्जन्यानामिकाभ्यां तु संहत्य तु कनिष्ठिकाम् ।
तेनैव वामहस्तेन दक्षिणेन कृता तु या ।
दीपमुद्रेति सा प्रोक्ता देवदेवप्रियाधिका ।
अन्येषामुपचाराणां मुद्रा सा स्यात् कृताञ्जलिः ।।



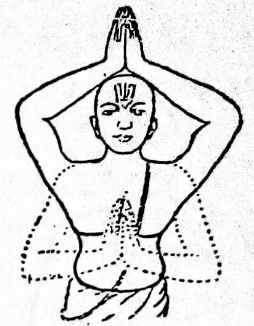
ग्रासमुद्रा

३४. पञ्चांगुलीनामग्रं तु संयोज्य कमलासन! ।
अन्वारब्धेन वामेन पाणिना दक्षिणेन च ।।
निवेद्या परमान्नादि मुद्रा सा ग्राससंज्ञिता ।।



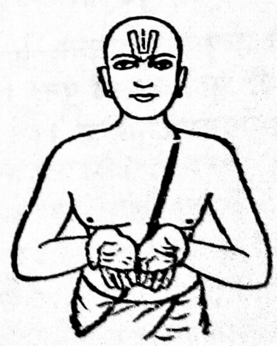
मुष्टिमुद्रा

३५. मुष्टिमुद्रा तु मुष्टिस्स्यादंगुष्ठेन तु वेष्टिता ।।



प्रणाममुद्रा

३६. हृदये शिरसि द्वेपि सम्पुटाञ्जलिरूर्ध्वगा ।
प्रणाममुद्रा सा ज्ञेया क्षिप्रं देवप्रसादिनी ।।



आवाहनमुद्रा

३७. हस्ताभ्यामञ्जलिं कृत्वा ईषद्विकसितं स्फुटम् ।
आवाहनस्य मुद्रैषा दर्शनात्सन्निधिं भजेत् ।।



योगसम्पुटमुद्रा

३८. योगमुद्रा करतलं सव्यं नाभेरधस्ततः ।
अवाङ्मुखं तदुपरि सव्ये करतलं पुनः ।।
समाङ्गुष्ठं विरचयेद्योगसम्पुटमुद्रिका ।।

***

अनुबंध ५

अलंकारस्नपनम्

अथाचार्यः स्वासने उपविश्य, देशकालौ संकीर्त्य, अस्य श्री .... स्वामिनः अभिषेकार्थं नवकलशस्नपनं करिष्यमाणः तदादौ स्नपनद्रव्यशुध्यर्थं भगवत्पुण्याहवाचनं करिष्ये । तदादौ विष्वक्सेनाराधनं च करिष्ये । तदंगपात्रासादनं च करिष्ये इति संकल्प्य ।।

विष्वक्सेनं यधाविधि संपूज्य । पुण्याहं वाचयित्वा । तज्जलेन स्नपनसंभारान् प्रोक्ष्य । कलशस्थापनार्थं व्रीहितंडुलतिलैः पीठं परिकल्प्य, सौवर्ण, राजत, ताम्र, मृण्मय, अन्यतम नवसंख्याक कलशान् - विष्णुगायत्र्या - प्रक्षाल्य ।।

ओं नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि । तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् ।।

"ओं रां नमः पराय विश्वात्मने " इति विश्वमंत्रेण- प्रागग्रं उदगग्रं वा दर्भानास्तीर्य । तदुपरि ब्रह्मादीशानान्तं प्रणवेन कलशान् अवाङ्मुखं विन्यस्य - **"ओं षौं नमः पराय परमेष्ठ्यात्मने"** - इति - परमेष्ठिमन्त्रेण - तान् दर्भैराच्छाद्य । - **'ओं यां नमः पराय पुरुषात्मने'** - इति - पुरुषमन्त्रेण - अर्घ्यजलेन कूर्चेन प्रोक्ष्य । **"ओं रां नमः पराय विश्वात्मने"** - इति -विश्वमन्त्रेण- तानुत्तानीकृत्य, ततः आचार्यः कुंडसमीपं गत्वा, स्वासने उपविश्य। देशकालौ संकीर्त्य। स्नपनद्रव्यशुध्यर्थम् अधिवासहोमं करिष्ये इति संकल्प्य । मुखाहुत्यन्तं हुत्वा । विष्णुगायत्र्या मूलमन्त्रेण च,

अष्टाविंशतिः अष्टौ वा आज्येन हुत्वा । पुरुषसूक्तेन चरुणा षोडशाहुतीर्हुत्वा, स्विष्टकृत्प्रायश्चित्ताहुतीः पूर्णाहुतिं च हुत्वा, तथैव सौवर्णादिपात्रेषु घृतं दूर्वांकुरान्, चंदनं, शालि, तंडुलांश्च निक्षिप्य, कलशान् अर्घ्यजलेनाभ्युक्ष्य,

मध्यमकलशम् - घृतस्नातेति साम्ना, प्रणवेन वा - **घृतेन** ।

प्राक्कलशम् - विष्णुगायत्र्या - **सदूर्वपाद्योदकेन** ।

ओं नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि । तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् ।।

आग्नेयकलशम् - दधिक्राव्णेति - **दध्ना** ।

ओं दधिक्राव्णो अकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः । सुरभिनो मुखाकरत्प्रण आयूꣳषि तारिषत् ।

याम्यकलशम् - तद्विष्णोरिति - **सिद्धार्थकार्घ्यजलेन** ।

ओं तद्विष्णो परमं पदꣳ सदा पश्यन्ति सूरयः । दिवीव चक्षुराततम् ।।

नैऋतकलशम्- पयोवृतसाम्ना, प्रणवेन वा- (आप्यायस्वेति वा) **पयसा**

ओं आप्यायस्वसमेतुते विश्वतस्सोमवृष्णियम् । भवावाजस्य संगथे ।।

वारुणकलशम् - न ते विष्णोरिति- **तक्कोलाचमनोदकेन** ।

ओं नते विष्णोजायमानो नजातो देवमहिम्नः परमन्तमाप। उदस्तभ्नानाकमृष्वं बृहन्तं दादर्थ प्राचीं ककुभं पृथिव्याः ।।

वायव्यकलशं - मधुवातेति- **मधुना** ।

ओं मधुवाता ऋतायते मधुक्षरंति सिंधवः । माध्वीर्नस्संत्वोषधीः । मधुनक्तमुतोषसि मधुमत्पार्थिवꣳ रजः। मधुद्यौरस्तु नः पिता । मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमाꣳ अस्तु सूर्यः । माध्वीर्गावो भवंतु नः।।

उदक्कलशम् - विष्णोकर्मेति - **पंचगव्येन**

ओं विष्णो कर्माणि पश्यत यतो व्रतानि पस्पसे । इंद्रस्य यज्यसखा ।।

ईशानकलशम्- याः फलिनीरिति - **कदळीफलसंयुक्तवारिणा संपूर्य।**

ओं याः फलिनीर्या अफला अपुष्पायाश्च पुष्पिणीः । बृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुंचत्वꣳ हसः ।

मध्यमकुंभे- चतुर्विंशतिदर्भकृतकूर्चम् अन्येषु सप्तभिः पंचभिः त्रिभिर्वा दर्भैः कृतकूर्चं - देवस्यत्वेति मन्त्रेण अवागग्रं निक्षिप्य ।

ओं देवस्यत्वा सवितुः प्रसवेश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णोहस्ताभ्यामाददे ।।

प्रवोयज्ञेष्विति- चूतपल्लवान् निक्षिप्य ।

ओं प्रवोयज्ञेषु देवयन्तोअर्चन्द्यावा नमोभिः पृथिवी इषध्यै। एषां ब्रह्माण्यसमानविप्राःविश्वग्वियन्ति वनिनोनुशाखाः

-याःफलनीरिति- नारिकेळफलानि विन्यस्य

ओं याः फलिनीर्या अफला अपुष्पायाश्च पुष्पिणिः ।
बृहस्पतिप्रसूतास्तानो मुंचन्त्व हसः ।।

युवासुवास - इति नववस्त्रैः कंठेषु वेष्टयित्वा ।

ओं युवासुवासाः परिवीत आगात्स उ श्रेयान्भवति जायमानः । तं धीरासः कवय उन्नयंति स्वाधियो मनसा देवयंतः ।।

मध्यम घृतकलशे - ओं वासुदेवाय नमः
- इति वासुदेवमावाहयामि,

प्राग्भागे पाद्यकलशे - ओं विष्णवे नमः
- इति विष्णुमावाहयामि,

दक्षिणे अर्घ्यकलशे - ओं मधुसूदनाय नमः
- इति मधुसूदनमावाहयामि,

पश्चिमे आचमनकलशे - ओं त्रिविक्रमाय नमः
- इति त्रिविक्रममावाहयामि,

उत्तरे पंचगव्यकलशे - ओं वामनाय नमः
- इति वामनमावाहयामि,

आग्नेये दधिकलशे - ओं श्रीधराय नमः
- इति श्रीधरमावाहयामि,

नैर्ऋत्यां क्षीरकलशे - ओं हृषीकेशाय नमः
- इति हृषीकेशमावाहयामि,

वायव्ये मधुकलशे - ओं पद्मनाभाय नमः
- इति पद्मनाभमावाहयामि,

ईशान्ये फलोदककलशे - ओं दामोदराय नमः
- इति दामोदरमावाहयामि

इत्यावाह्य, अर्घ्यादि- नीराजनान्तमभ्यर्च्य। ***'ओं नमस्सुदर्शनाये'ति*** - मन्त्रेण दर्भैः कलशान् पिधाय, तदनु आचार्यः स्नानबिंबं मूलबिंबनिकटं प्रापय्य । ***"ओं नमो भगवते वासुदेवाय"*** - इति मंत्रेण मूलबिंबस्थतेजोंशम् आवाहनपात्रे समावाह्य, कूर्चेन तत्पात्रस्थतोयेन -

श्लो।। आवाहयामि लक्ष्मीशं परमात्मानमव्ययम् ।
आतिष्ठ तामिमां मूर्तिं मदनुग्रहकाम्यया ।।

इति मन्त्रेण स्नानबिंबशिरसि प्रोक्ष्य, तत्र बिंबात्मनाऽवस्थितं विभाव्य, प्रणम्य, स्वागत- प्रतिमामुद्रे दर्शयित्वा, सन्निधिं प्रार्थ्य ।

श्लो।। जितं ते पुंडरीकाक्ष! नमस्ते विश्वभावन! ।
नमस्तेऽस्तु हृषीकेश! महापुरुष! पूर्वज! ।।

इति *पुंडरीकाक्षविद्यया,* सम्मुखीकरणमुद्रया च सम्मुखीकृत्य प्रार्थयेत् ।।

श्लो।। स्फुटीकृतं मया देव! इदं स्नानासनं त्वयि ।
सपादपीठमपरं शुभं स्नानासनं महत् ।।
आसादयाशु स्नानार्थं मदनुग्रहकाम्यया ।।

इति प्रार्थ्य, पादयोः पुष्पांजलिं समर्प्य । अर्घ्यादिभिरुपचारैः उपचर्य। इदं विष्णुरिति - त्रीणिपदेति मंत्राभ्यां पादुकारोहणं ध्यात्वा।।

"ओम् इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्य पा सुरे ।

ओम् त्रीणि पदा विचक्रमे विष्णुर्गोपा अदाभ्यः ततो धर्माणि धारयन् ।।

भद्रंकर्णेभिरिति अर्धमंडपस्थस्नानपीठं प्रापय्य ।

ओम् भद्रं कर्णेभिश्शृणुयाम देवाः । भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः । स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवा संस्तनूभिः । व्यशेम देवहितं यदायुः ।।

अर्घ्यादिभिरभ्यर्च्य - स्नानबिंबचरणयोः सुशोभनमिति - कट्यां सुभद्रमिति-मूर्ध्नि सुमंगळमिति, घृत-दूर्वांकुरान् गंधमक्षतांश्च विन्यस्य, एवं घृतारोपं कृत्वा, प्राग्वदर्घ्यपाद्याचमनानि दत्वा । तद्विष्णोरिति - मन्त्रेण चूतदंडेन दन्तधावनं कृत्वा ।

ओं तद्विष्णोः परमं पद सदा पश्यन्ति सूरयः । दिवीव चक्षुराततम् ।।

तद्विप्रास इति - तधाविधपत्रेण जिह्वानिर्लेखनं च कृत्वा ।

ओं तद्विप्रासो विपन्यवो जागृवांसस्समिन्धते । विष्णोर्यत्परमं पदम् ।।

द्वासुपर्णा इति गंडूषणम् ।

ओम् द्वासुपर्णौ सयुजौ सखायौ समानं वृक्षं परिषस्वजाते। तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्यनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति।।

विष्णुगायत्र्या - मुखप्रक्षाळनं च विधाय ।

ओम् नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् ।।

शुद्धवस्त्रेण मुखं विमृज्य, स्नानशाटकं समर्प्य, मुखवासं निवेद्य, पात्रं सुगन्धतैलेनापूर्य, तत्पात्रं माल्येनालंकृत्य, धूपेन परिमळीकृत्य, स्नानार्चास्कन्धे वस्त्रेणाच्छाद्य, केशान्विकीर्णान् सम्भाव्य, शिरोमध्ये वामदेव्येन इति मन्त्रेण प्रणवेन वा तैलमासिच्य।

ओम् वामदेव्येन साम्ना वषट्कारेण वज्रेणापरजानिन्द्रेण सयुजो वय सासह्याम पृतन्यतः । घ्नन्तो वृत्राण्य प्रति।।

भावनया आवृत्त्यावृत्त्य निष्पीड्य, नखैः सुसुखं कंडूयनं कृत्वा, केशान् बध्वा तान् पुष्पमालया संवेष्ट्य, स्कन्धवस्त्रमपनीय, पुनस्तैलं स्पृष्ट्वा, अंगोपांगानि निष्पीडं मर्दयित्वा, -विष्णोर्नुकमिति- चन्दनेन अंगान्युद्वर्त्य ।

ओम् विष्णोर्नुकं वीर्याणि प्रवोचं यः पार्थिवानि विममेरजा सि यो अस्कभाय दुत्तर सदस्थं विचक्रमाणस्त्रेधोरुगायो विष्णो रराटमसि विष्णोः पृष्ठमसि विष्णोश्श्नप्त्रेस्थो विष्णो स्यूरसि विष्णोर्ध्रुवमसि वैष्णवमसि विष्णवेत्वा।।

न ते विष्णुरिति गन्धामलकवारिणा देवगात्रं प्रक्षाल्य ।

ओम् नते विष्णो जायमानो नजातो देवमहिम्नः परमन्तमाप। उदस्तभ्नानाकमृष्वं बृहन्तं दाधर्थ प्राचीं ककुभं पृथिव्याः ।।

आपोहिष्ठेतिमन्त्रेण शुद्धोदकेनाभिषिच्य ।

ओम् आपोहिष्ठामयो भुवस्तान ऊर्जे दधातन । महेरणाय

चक्षसे । योवश्शिवतमोरसस्तस्य भाजयतेहनः । उशतीरिव मातरः । तस्मा अरंगमामवो यस्यक्षयाय जिन्वथ । आपोजनयथाचनः ।।

अतोदेवा अवन्त्विति - कंकतेन केशान् संशोध्य,

ओम् अतो देवा अवन्तु नो यतो विष्णुर्विचक्रमे । पृथिव्यास्सप्तधामभिः ।।

अर्घ्यादि- दीपान्तमभ्यर्च्य, प्रथमं प्रागाद्युत्तरान्तं पाद्यादि- दिक्कलशचतसृभिः, अनन्तरं आग्नेयादीशानान्तं दध्यादि विदिक्कलश चतसृभिः, ब्रह्मपदस्थ घृतकलशेनान्तरान्तरा उपस्नान प्लोतवस्त्रोत्तरीयदानार्घ्यादि दीपान्तं सप्तोपचारसहितं पूर्वोक्तस्नपनद्रव्य पूरणमन्त्रैः देवं संस्नाप्य, उष्णोदकेन गात्रस्नेहं निरस्य, - हिरण्यवर्णाश्शुचय- इति चतसृभिः गन्धवारिणा संक्षाल्य ।

१ ओम् हिरण्यवर्णाश्शुचयः पावका यासुजातः कश्यपोयास्विन्द्रः । अग्निं या गर्भं दधिरे विरूपास्तान आपश्शग्ग् स्योना भवन्तु।

२ यासा॒ राजा वरुणो याति मध्ये सत्यानृते अवपश्यन् जनानाम् । मधुश्चुतश्शुचयो याः पावकास्तान आपश्शग्ग्स्योना भवन्तु ।

३ यासां देवा दिवि कृण्वन्ति भक्षं या अन्तरिक्षे बहुधा भवन्ति । याः पृथिवीं पयसोन्दन्ति शुक्रास्तान

आपश्शग्ग्स्योना भवन्तु।

४ शिवेनमाचक्षुषा पश्यतापशिवया तनुवोपस्पृशत त्वचं मे। सर्वा॒ अग्नी॒ रप्सुषदो हुवेवो मयि वर्चो बलमोजो निधत्त।।

हिरण्यवर्णामिति - हरिद्रालेपनं कृत्वा ।

ओम् हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजां । चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो ममावह ।।

विष्णुगायत्र्या कुंकुमपुष्पेणानुलिप्य ।

ओं नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि । तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् ।।

'पावमानीभिः', 'ब्रह्मजज्ञानं', 'कयानश्चित्रैताभ्याम्' शुद्धोदकेन संक्षाल्य, अर्घ्यादिदीपांतमभ्यर्च्य बद्धांजलिः -

त्वं मेऽहं मे कुतस्तत् तदपि कुत इदं वेदमूलप्रमाणात्
एतच्चानादिसिद्धादनुभवविभवात्तर्हि साक्रोश एव ।
क्वाक्रोशः कस्य गीतादिषु मम विदितः कोऽत्र साक्षी सुधीः स्यात्।
हंत! त्वत्पक्षपाती स इति नृकलहे मृग्यमध्यस्थवत्त्वम् ।।

देवदेव! सुरास्सिद्धास्तीर्थानि च महर्षयः ।
त्वत्सेवार्थं स्थितास्सर्वे स्नानेनैतान् कृतार्थय ।।

सर्वमंगळसंयुक्तवेदवाद्यादिघोषणैः ।
सहस्रधारया स्नानं कर्तुं देव प्रसीद ओम् ।।

इति शंखचक्र सहस्रधारसहित- वेदवाद्यादिघोषणैः पुरुषसूक्तेन अभिषिच्य। *'अग्निर्मूर्धानमिति'* प्लोतवस्त्रेण अङ्गांबु निर्हृत्य । मूर्धानमिति धूपं समर्पयामि ।।

।। इति अलंकारस्नपनम् ।।

भगवदाराधनाविधिःसमाप्तः

स्वस्ति







जीयर् एड्युकेषनल् ट्रस्ट्,
सीतानगरम्,
गुंटूर् जिला, (आन्ध्रप्रदेश) ५२२ ५०१,